समकालीन साहित्य, संस्कृति,
कला और विचार का मासिक

उत्तर प्रदेश

फरवरी–मार्च–अप्रैल–2025, वर्ष 50

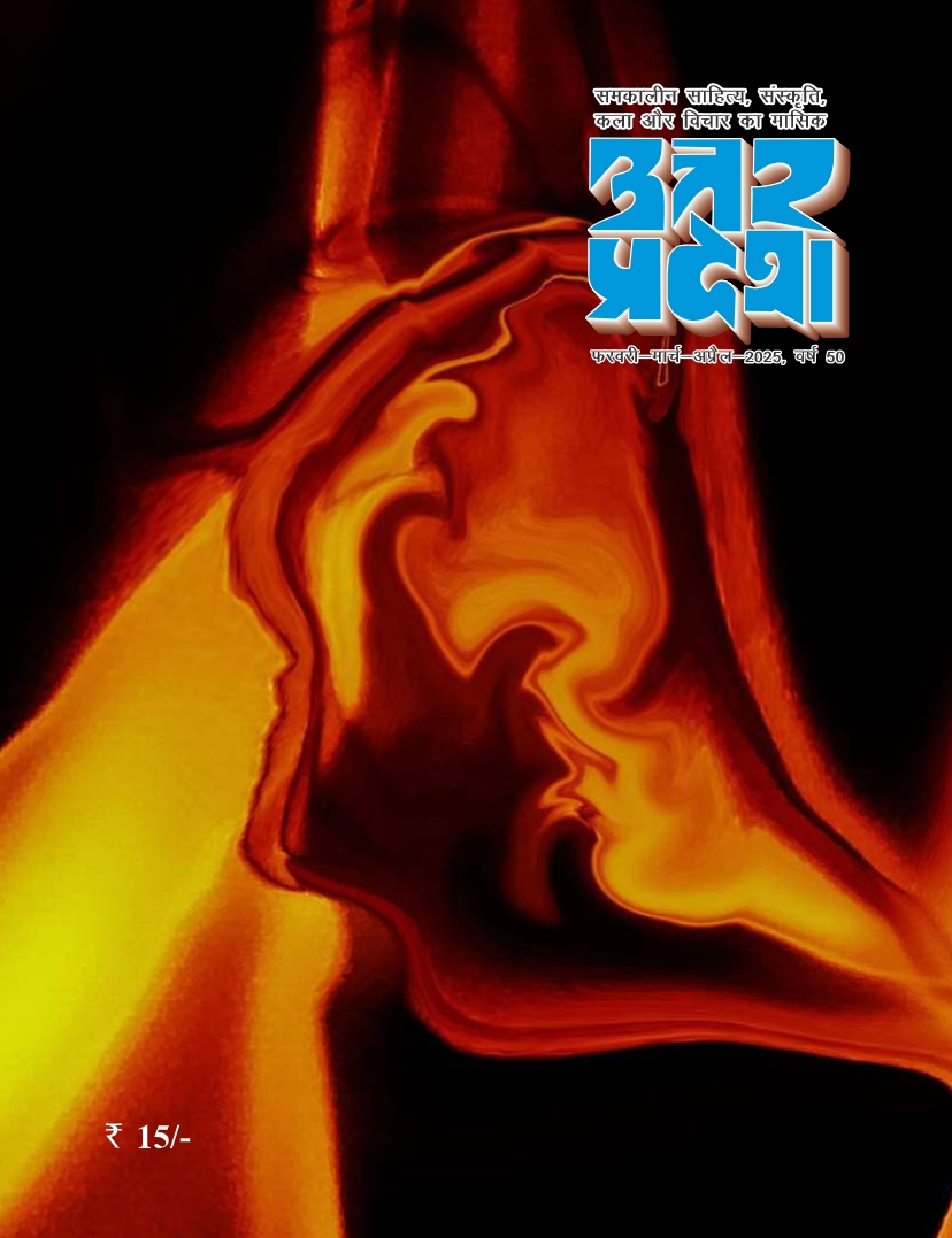

₹ 15/-

सुशांत सुप्रिय की एक कविता

लौट आऊँगा मैं

कलम में
रोशनाई–सा
पृथ्वी पर
अन्न के दाने–सा
कोख में
जीवन के बीज–सा
लौट आऊँगा मैं

आकाश में
इंद्रधनुष–सा
धरती पर
मीठे पानी के
कुएँ–सा
ध्वंस के बाद नव–निर्माण–सा
लौट आऊँगा मैं

लौट आऊँगा मैं
आँखों में नींद–सा
जीभ में स्वाद–सा
थनों में दूध–सा

ठूँठ हो चुके पेड़ में
नई कोंपल–सा
बच्चे के मसूड़े में
नये दाँत–सा
लौट आऊँगा मैं

जैसे महाशंख से चलकर
शून्य तक लौट आती है
उलटी गिनती
जैसे जीवन लौट आता है
आसन्न–मृत्यु–बोध के
मरीज में
वैसे लौट आऊँगा मैं

तुम एक बार
पुकार कर तो देखो

◆

पता : ए–5001, गौड़ ग्रीन सिटी,
वैभव खंड, इंदिरापुरम,
गाजियाबाद–201014
मो. : 8512070086

अनुक्रम

साक्षात्कार

- 'कवि सम्मेलनों में ठेकेदार पैदा हो गये हैं' ❑ पद्मभूषण नीरज / 3

लेख

- आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस और बिना इंटेलिजेंस का जीवन ❑ वीरेंद्र बहादुर सिंह / 5

कहानी

- मन्नो ❑ संध्या ठाकुर रियाज़ / 7
- ठहरी हुई मुस्कान ❑ पवन चौहान / 12
- फेसबुक का प्रेम ❑ पायल सोनी / 19
- जीवन की नई राहें ❑ रीता दास राम / 21
- धीरज ❑ पुष्पेश कुमार पुष्प / 25
- वह अद्भुत प्रेम ❑ रेनू सैनी / 29
- वक्त रहते ❑ रोचिका अरुण शर्मा / 37
- लौटना ❑ सुशांत सुप्रिय / 41

लघुकथा

- आईने के बाहर और अन्य लघुकथाएं ❑ पवन शर्मा / 43

कविताएँ

- सुशांत सुप्रिय की एक कविता ❑ आवरण–2
- अंजु अग्निहोत्री की दो कविताएँ ❑ आवरण–3
- रविशंकर पांडेय की चार कविताएँ / 44
- मोहम्मद आक़िब ख़ान की एक कविता / 47
- विभा कनन की एक कविता / 48
- धर्मेन्द्र गुप्त साहिल की कविताएँ / 49
- महेश कुमार केशरी की कविता / 50
- नरेन्द्र सिंह की तीन कविताएँ / 52
- रेखा शाह की कविता / 54
- डॉ. सुधा मौर्य की कविता / 55
- अलका अस्थाना की दो कविताएँ / 56

पुस्तक समीक्षा

- आलोचना के आलोक में प्रेमचंद्र ❑ उषा राय / 58
- जीवन के इंद्रधनुषी रंग छलकाती अद्भुत कहानियाँ ❑ भगवती प्रसाद गौतम / 62

संरक्षक एवं मार्गदर्शक : ❑ **संजय प्रसाद**
प्रमुख सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी : ❑ **शिशिर**
सूचना निदेशक, उत्तर प्रदेश

सम्पादकीय परामर्श : ❑ **अंशुमान राम त्रिपाठी**
अपर निदेशक, सूचना

❑ **डॉ. जितेन्द्र प्रताप सिंह**
सहा. निदेशक, सूचना

प्रभारी सम्पादक : ❑ **दिनेश कुमार गुप्ता**
उपसम्पादक, सूचना

सम्पादकीय संपर्क : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
मो. : 7705800978, 9412674759
ईमेल : upmasik@gmail.com

दूरभाष : कार्यालय : ई.पी.ए.बी.एक्स 0522–2239132–33, 2236198, 2239011

उत्तर प्रदेश

❑ वर्ष 49 ❑ अंक 72, 73, 74
❑ फरवरी–मार्च–अप्रैल–2025

पत्रिका information.up.nic.in वेबसाइट पर उपलब्ध है।

❑ एक प्रति का मूल्य : पंद्रह रुपये
❑ वार्षिक सदस्यता : एक सौ अस्सी रुपये
❑ द्विवार्षिक सदस्यता : तीन सौ साठ रूपये
❑ त्रैवार्षिक सदस्यता : पांच सौ चालीस रुपये

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे मासिक पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।
—सम्पादक

आवर्तन

इस रास्ते के नाम लिखो एक शाम और।
या इसमें रौशनी का करो इन्तज़ाम और।।
आँधी में सिर्फ हम ही उखड़कर नहीं गिरे।
हमसे जुड़ा हुआ था कोई एक नाम और।।

–दुष्यन्त कुमार

दुष्यन्त कुमार एक ऐसा नाम जिनकी ग़ज़लों के एक–एक शेर समय–समय पर नारे को इतनी लोकप्रियता मिली कि उनके कई शेर, कहावतों और मुहावरों की तरह व्यवहृत्त कुछ भी लिखा वह अमर हो गया। उनका पूरा नाम दुष्यन्त कुमार त्यागी था। दुष्यन्त कुमार साहित्यिक क्षेत्र में आगमन से पहले ही भोपाल के दो प्रगतिशील शायर ताज भोपाली तथा क़ैफ भोपाली प्रसिद्ध हो चुके थे। दुष्यन्त के आने से पहले ही हिन्दी में आम आदमी की बात कहने वाले अज्ञेय, नागार्जुन, मुक्तिबोध धूमिल भी सुप्रसिद्ध थे। इसी समय में दुष्यन्त ने ग़ज़ल को एक नया रूप देते हुए हिन्दी ग़ज़ल की शुरूआत की। आम बोलचाल की भाषा में दिल तक उतर जाने वाली उनकी भाषा में लिखी गई ग़ज़लें उस समय युवावर्ग में लोकप्रिय हो गईं और कम उम्र में ही उन्हें जो ख्याति मिली वह कम लोगों को मिल पाती है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उन्होंने एम.ए. किया तो उनके साथी रहे कथाकार कमलेश्वर, मार्कण्डेय, धर्मवीर भारती, विजयदेवनारायण साही, डॉ. उषा सक्सेना, डॉ. राजकुमार शर्मा, जिनके सम्पर्क में उनकी साहित्यिक अभिरूचि को नया आयाम मिला है। डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के सान्निध्य से उनके लेखन को धार मिली। 1975 में उनका प्रथम ग़ज़ल संग्रह 'साये में धूप' प्रकाशित हुआ था जिसने धूम मचा दी थी। 52 ग़ज़लों की यह छोटी सी किताब इतनी लोकप्रिय हो गई कि उनके कई शेर तो मुहावरों, कहावतों की तरह कहे जाने लगे। उनका एक शेर–''कैसे आकाश में सुराख नहीं हो सकता एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारों'' बहुत प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने पूँजीवाद पर तीखे व्यंग्य किए।

एक जगह वे कहते हैं, 'आपके कालीन देखेंगे किसी दिन, इस समय तो पांव कीचड़ में सने हैं। निदा फ़ाज़ली उनके लिए कहते हैं–''दुष्यन्त की नज़र उनके युग की नई पीढ़ी के गुस्से और नाराज़गी से सजी बनी है। यह गुस्सा और नाराज़गी उस अन्याय के खिलाफ नए तेवरों की आवाज़ थी, जो समाज में मध्यवर्गीय झूठेपन की जगह पिछड़े वर्ग की मेहनत और दया की नुमाइन्दगी करती है।'' 44 वर्ष की कम उम्र में असमय उनका देहान्त 30 दिसम्बर, 1975 को हो गया था। उनका जाना हिन्दी ग़ज़ल की दुनिया में अपूरणीय क्षति थी। उनके दो ही ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हुए 'सासे में धूप' और 'एक कंठ विषपाथी' इसके अतिरिक्त उनका नाटक 'और मसीहा मर गया' भी प्रसिद्ध हुआ। 'सूर्य का स्वागत', 'आवाज़ों के घेरे', 'जलते हुए वन का वसंत' उनके काव्य संग्रह है। 'छोटे–छोटे सवाल', 'आँगन में एक वृक्ष', 'दोहरी ज़िदगी' उनके उपन्यास तथा 'मन के कोण', उनकी लघुकथाओं का संग्रह है।

इस अंक में पद्मभूषण नीरज जी के साथ अशोक अंजुम द्वारा की गयी वार्ता, संध्या ठाकुर रियाज़, रेनू सैनी, पवन चौहान, रीतादास राम, पायल सोनी, सुशांत सुप्रिय आदि की कहानियाँ डॉ. रविशंकर पाण्डेय, धमेन्द्र गुप्त, अंजु अग्निहोत्री, डॉ. सुधा मौर्य आदि की कविताएँ तथा पुस्तक समीक्षा ऊषा राय और भगवती प्रसाद गौतम की है।

हमारे अंक आपको कैसे लग रहे हैं, अपनी प्रतिक्रियाओं से अवश्य अवगत कराते रहियेगा।

● दिनेश कुमार गुप्ता

'कवि सम्मेलनों में ठेकेदार पैदा हो गये हैं'

❑ पद्मभूषण नीरज

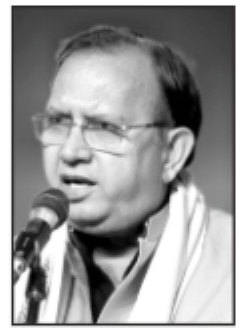

(पद्मभूषण नीरज से हिन्दी काव्य–मंच के अतीत और वर्तमान पर केन्द्रित, ''कवि अशोक 'अंजुम''' द्वारा की गई बातचीत का अंश...)

अंजुम– आप हिन्दी काव्य–मंचों से कब और किस उद्देश्य से जुड़े?

नीरज– मैंने एक हिन्दी कवि गोष्ठी में सर्वप्रथम 1941 में एटा में काव्य–पाठ किया था। उस समय मेरा उद्देश्य भाषा का प्रचार–प्रसार और साथ ही साथ अच्छी से अच्छी कविता लिखना था।

अंजुम– आप इस बात से किस हद तक सहमत हैं कि पिछले दशकों की अपेक्षा आज के हिन्दी काव्य–मंचों की दशा और दिशा में भारी बदलाव आया है ?

नीरज– आज से लगभग 40 वर्ष पूर्व हिन्दी के कवि सम्मेलनों में हिन्दी के श्रेष्ठतम् कवि और समालोचक अध्यक्षता करते थे और सुनने के लिए पढ़ा–लिखा, साहित्यप्रेमी, काव्यप्रेमी, बुद्धिजीवी वर्ग उपस्थित होता था। उस समय दद्दा मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, निराला जी, पंत जी, महादेवी जी, बच्चन जी आदि काव्य के पुरोधा अध्यक्षता करते थे और उस समय उसी कवि को मंच पर प्रवेश मिलता था जिसकी कविता उनके मानदण्डों के अनुसार सही होती थी या जिसकी कोई पुस्तक प्रकाशित हो चुकी होती थी। मेरा पहला काव्य–संग्रह 1954 में प्रकाशित हुआ। धीरे–धीरे कवि सम्मेलन जो विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, विद्यालयों में पढ़े–लिखे लोगों के बीच होते थे, वे वहाँ से निकलकर प्रदर्शनियों में, मेलों में, पशुमेलों में पहुँचने लगे और वहाँ शनैः–शनैः बुद्धिजीवियों के स्थान पर नासमझ भीड़ का बहुमत हो गया और कवियों ने नीचे उतरकर उनके मनोरंजन को कविता का साधन मान लिया। कवि का धर्म होता है कि वो नीचे बैठे आदमी को ऊपर उठाए, इसके विपरीत यह काम कवियों ने किया। इस गिरने के पीछे यश लिप्सा और अर्थ लिप्सा थी।

अंजुम— गीतों–गज़लों और छन्दों के एकाधिपत्य को तोड़ते हुए, उसी के समानान्तर हास्य–व्यंग्यकारों की जिन रोचक रचनाओं के द्वारा हिन्दी काव्य–मंचों को व्यापक लोकप्रियता मिली, कालान्तर भी उन्हीं हास्य–व्यंग्यकारों की अश्लील पैरोडियों, बासी चुटकुलों और भद्दे लतीफों पर रचित नितांत फूहड़ कविताओं और सम्प्रेषण शैली की हास्यास्पद भाव–भंगिमाओं के कारण हिन्दी काव्य–मंचों की लोकप्रियता में भारी गिरावट आयी है। आप इस बात से कहाँ तक सहमत हैं ?

नीरज— शुरू–शुरू में जब हास्य–व्यंग्य का प्रादुर्भाव मंच पर हुआ तब श्रेष्ठ से श्रेष्ठ रचनाएं लिखी गईं। इस दिशा में कवि अशोक चक्रधर, माणिक वर्मा, सुरेश उपाध्याय आदि का बहुत बड़ा योगदान रहा, लेकिन धीरे–धीरे अर्थ लिप्सा के कारण बहुत से अनाधिकारी व्यक्तियों ने मंच पर प्रवेश कर लिया, जो कविता के नाम पर चुटकले, मिमिक्री, अभिनय आदि लेकर आए, जिन्होंने हास्य–व्यंग्य की परम्परा को नष्ट–भ्रष्ट कर दिया। एक बार एक कवि मंच से चुटकले सुना रहा था, तो नीचे बैठे एक श्रोता ने कहा कि 'भाई कुछ कविता सुनाइये, चुटकले तो हमने बहुत सुने हैं।' वह बोला कि 'भाई मैं तो आपको हँसाने आया हूँ, वही कर रहा हूँ ' वह जानता है कि भीड़ जितनी मेरी प्रस्तुति पर तालियाँ बजाएगी, उतनी ही सफ़लता मिलेगी। इसमें मीडिया की भी गलत भूमिका रही, क्योंकि जो रिपोर्टर थे उनके पास कविता की समझ का अभाव था। काव्य मंच के पतन के पीछे बस दो ही कारण हैं, अर्थ लिप्सा और यशेष्णा।

अंजुम— मंचों से जुड़ी 'हास्य–व्यंग्य मंडली' के कुछ कवि कारीगरों, व्यावसायिक विदूषकों और आयोजनों द्वारा परस्पर आदान–प्रदान वाली अर्थात 'तू मुझे बुला, मैं तुझे बुलाऊँ' की एक नूतन संस्कृति को जन्म देने वाले धंधेबाज संयोजकों के अनेक गुट अब काव्य–मंचों पर काबिज हो गये हैं, जिससे मंच की सारी मर्यादाएं धीरे–धीरे लुप्त होती जा रही हैं। फलस्वरूप अधिकांश काव्य–मंच अब राजकीय संस्थानों अथवा महानगरों के तनावग्रस्त धनकुबेरों की मानसिक–तुष्टि का साध्य बनकर एक बार फिर उन्हीं नव–धनाढ्य दरबारों की संकुचित सीमाओं में सिमटता जा रहा है, और अधिकांश शालीन–शिष्ट मंच प्रतिष्ठापित कवि उससे कतराते जा रहे हैं। मंच की इन त्रासद स्थितियों के लिए आप किसे उत्तरदायी मानते हैं ?

नीरज— सच ही है, आजकल का नियम यह बन गया है कि 'तू मुझे बुला मैं तुझे बुलाऊँ।' आजकल कवि संयोजक यह देखते हैं और उन लोगों को बुलाते हैं जो किसी क्षेत्र के संयोजक हों, और कार्यक्रम में दिखावे के लिए किसी एकाध स्थापित गीतकार को बुला लेते हैं। अब कवि सम्मेलनों के ठेकेदार पैदा हो गये हैं। दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, कोलकाता, मुम्बई आदि जगह ठेकेदारी की प्रथा हो गई है। लोग मिमिक्री करते हैं , लालू आदि की मिमिक्री की जाती है। कवि सम्मेलनों का मंच जितना पतित अब हुआ है, उतना पहले कभी नहीं हुआ । कभी–कभी तो इनमें भाग लेने में शर्म आती है। अब तो मैं ये करता हूँ कि अधिकांश एकल काव्य–पाठ करता हूं जिनमें 200 से 500 तक पढ़े–लिखे लोग आते हैं।

अंजुम— आप हिन्दी काव्य–मंचों के प्रादुर्भाव और उसकी अतीत–यात्राओं से जुड़े मंचों के आलोक–शिखर रूप में समादृत हैं। हिन्दी काव्य–मंचों पर आपके विराट–व्यक्तित्व की एक हनक भी है। उक्त स्थितियों में मंचों की विलुप्त होती स्वस्थ–परम्पराओं और टूटते नैतिक–मानदण्डों के प्रति आप की क्या भूमिका होनी चाहिए?

नीरज— कवि गोष्ठियों का आयोजन किया जाए वह भी आमंत्रित श्रोताओं के मध्य, जिससे कविता की खोती हुई पहचान पुनः वापस लौटेगी। कविता को जो बुरी तरह से नकार रहे हैं, उसके नाम पर गंदगी फैला रहे हैं, उनके लिए चार पंक्तिया कहूँगा–

तू कवि है तो फिर काव्य को बदनाम न कर
जो मन में गंदगी है उसे आम न कर
कविता तू जिसे कहता वो बेटी है तेरी
चौराहे पर लाकर उसे नीलाम न कर

अंजुम— और अंत में, हिन्दी काव्य–मंचों से जुड़े रचनाकारों और उसके संयोजकों को आप क्या संदेश देना चाहेंगे ?

नीरज— कवि सम्मेलनों का संयोजन पढ़े–लिखे सुधी लोगों के हाथ में होना चाहिए और संचालन करने वाले को पूरी साहित्यिक गरिमा और परम्परा का ज्ञान होना चाहिए।•

पता : स्ट्रीट–2, चन्द्रविहार कॉलोनी (नगला डालचन्द),
क्वार्सी बाईपास, अलीगढ़– 202002
मो. : 9258779744

आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस और बिना इंटेलिजेंस का जीवन

❑ वीरेंद्र बहादुर सिंह

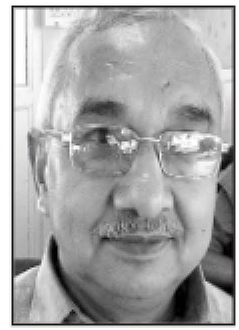

समय बदलता है, वक्त निकल जाता है, नई खोजें होती हैं, अद्‌भुत शोध होते हैं, चंद्रमा पर घूम कर आते है और डिजिटल क्रांति का शंखनाद होता है। फिर न जाने कौन, क्यों इस आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस के ज़माने में मारण मंत्र, सम्मोहन विद्या आजमाने जैसे मामलों में श्रद्धा रखने वाले और उसी के अनुसार व्यवहार करने वाले मनुष्य मिलते हैं। वशीकरण और उच्चाटन विद्या को मानते हैं। भूत–प्रेत–चुड़ैल–डाकिनी का भयावह भ्रम कमजोर मन वाले मनुष्य में फैलता जाता है। जिसका डर लगता है, हमेशा उसी की बात करता है। विज्ञान के आकाश में भले उड़ते रहें, पर वास्तविक धरती पर सच्चाई भूलनी नहीं चाहिए।

कोई कहता है कि अष्टदल मंत्र लिख कर जपने से या होम करने से कोख छूटती है और संतान होती है तो 6 कोने का मंत्र लिख कर, श्वेत वस्त्र पहन कर, श्वेत आसन पर बैठ कर पूर्व दिशा में मुंह कर माला से सवा लाख बार जपने और अंगूर, चारोली, बादाम और गुग्गुल का होम करने से धन मिलता है और भविष्य में बरकत होती है। यही नहीं नया कपड़ा, नया गहना या नया कुछ भी पहनने के पहले काला धागा बांधा जाता है। निमंत्रण में लोगों को खीर खिलाने से पहले दूध में लोगों की नज़र न लगे, दूध में कोयले का टुकड़ा डाला जाता है। इस तरह के न जाने कितने शकुन–अपशकुन से हमारा समाज घिरा पड़ा है।

जो परिस्थिति 1850 में थी, वही परिस्थिति 174 साल बाद आज भी है। इसमें कोई ख़ास परिवर्तन नहीं आया है। 1850 में गुजरात के एक कवि दलपतराम ने गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी के लिए 'भूत' पर एक लेख लिखा था, जिसकी अनेक आवृत्तियां अनेक भाषाओं में प्रकाशित हुई थीं। परन्तु हक़ीकत यह है कि इतनी अधिक प्रगति होने के बाद भी समाज में पैदा होने वाले वहम में ख़ास बदलाव नहीं आया है।

आज भी देवी को रिझाने के लिए मासूम बच्चों की बलि दी जाती है। नज़र उतारने के लिए तरह–तरह के नुस्खे अपनाए जाते हैं। आकाशीय ग्रहों की चाल के अनुसार जीवन के बदलने की बात होती है और तमाम लोग उन्नति और अवनति के लिए ग्रहदशा को कारणभूत मानते हैं। इसके बाद राशि भविष्य का बोलबाला है। फल ज्योतिष की तमाम बातों में एकाध बात सच हो जाती है तो लोग मानने लगते हैं कि फल ज्योतिष सच बताने वाला शास्त्र है। इसके पीछे व्यक्ति की मान लेने वाली वृत्ति ज़िम्मेदार है और आज तो राजनेताओं से लेकर अपने

वर्तमान या भविष्य से पीड़ित लोग इसकी शरण में पहुंच रहे हैं। एक समय था, जब ऐसे वहम् से लड़ने वाली अनेक संस्थाएं और व्यक्ति थे। रूढ़ियों का सामना करते हुए समाज से दो–दो हाथ करने वाले बहादुर थे। पर पता नहीं आज इसमें अकाल सा पड़ गया है। आज 2025 में भी लोग भूतप्रेत की बातें सत्य घटना के रूप में करते हैं। कोई खुद का अनुभव बताता है तो कहीं इमली, पीपल, बरगद या खण्डहर में भूत होने की बात की जाती है, तो कहीं किसी के शरीर में सवार हो कर भूत की बात करता है तो कहीं किसी जानवर का रूप ले कर, आग के शोले छोड़कर लोगों को डराता है। इस तरह की मान्यताओं के कारण बहुत लोग पूरे जीवन भय में जीते हैं। डर, विषाद, हताशा और आत्मविश्वास को गिरवी रख देते हैं। आज जब आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस की बात होती है तो भी इस समय तमाम बिना इंटेलिजेंस की बातें मानी जाती हैं। तब इस तरह को वहमों का मुकाबला करने वाले लोगों की याद आती है, जो समाज को एक सच्ची दिशा दिखाते थे। हमने मरने के बारे में तमाम शकुन और अपशकुन और मान्यताओं को इकट्ठा किया, जिनका आज के विज्ञान युग में शिक्षित लोग भी अंधा अनुकरण करते हैं।

इसका एक मार्मिक उदाहरण यहां पेश है। हमारे गांव में एक वयोवृद्ध की मौत हो गई। उनके बेटे ने कहा कि आप दो लोगों को अंतिम संस्कार के लिए चलना है। पर धीरे–धीरे करीब 25 लोग इकट्ठा हो गए। बड़े वाहन की व्यवस्था करनी पड़ी। घाट पर उनके नाश्तेपानी की भी व्यवस्था की गई। यह स्वाभाविक है कि किसी की मौत होने पर उसके सगे संबंधी दुःख में हिस्सेदार होने और आश्वासन देने के लिए आते हैं। पर जिनका मृत व्यक्ति से कोई संबंध नहीं होता, उनका मरने पर अंतिम संस्कार में जाकर खर्च बढ़ाने का क्या अर्थ है?

इससे कितने लोगों का समय, शक्ति और धन बेकार जाता है। हमारे यहां मृत्यु की घटना को बारबार दोहराने का रिवाज़ है। मरने वाले के घर वालों को सांत्वना देने के बजाय बहुत लोग बार–बार उसके अच्छे–खराब जीवन के बारे में बातें करते हैं। इससे भी ख़राब रिवाज तो यह है कि जब भी कोई नजदीकी रिश्तेदार आता है तो घर की महिलाओं को उसके सामने जोर–जोर से रोना पड़ता है। जबकि यह रिवाज़ महज दिखावा होता है। रोने के थोड़ी देर बाद सभी सामान्य नज़र आने लगते हैं।

इसके बाद दसवें दिन बाल बनवाने की बात तो साफ–सफाई से जुड़ी है, वह तो ठीक, पर पंडित को हजारों लाखों के सामान का दान करना कहां तक उचित है। मरने वाला तो मर गया, उसके नाम से किया गया दान? इससे उसे क्या मिलेगा? घर वाले घर का एक आदमी खो कर वैसे ही दुःखी होते हैं, उसमें इस तरह का खर्च उनके दुःख को और बढ़ाता है।

फिर आता है तेरहवां दिन, जिस दिन पूरे समाज को पूड़ी–सब्जी और मिठाई खिलाई जाती है। आने वालों को आग्रह कर के खिलाया जाता है। जो लोग साधन–संपन्न होते हैं, उनके लिए तो कोई बात नहीं, पर गरीबों को यह सब कर्ज लेकर करना पड़ता है। लोग अपना परिजन तो खोते ही है, लाखों का कर्ज़ ऊपर से लाद लेते हैं। मृत्यु दुःख का मौका है। भले ही वह किसी वृद्ध की ही मृत्यु क्यों न हो। ऐसे मौके पर रोना और फिर उसके बाद मिठाई खाना भला यह कैसा रिवाज़ है? सगे संबंधी दुःख बंटाने आते हैं। ऐसे में मौके को देख कर सादा भोजन ही उचित लगता है।

मृत्यु के बाद इस तरह के अजीब रिवाज़ और घटनाएं देखने को मिलती हैं। विवाह और मृत्यु के वहम् के बंधन में हम किस तरह बंधे हुए हैं। कोई अविवाहित लड़का हो, युवा हो या अधेड़, उसके मरने के बाद यह सारे कर्मकांड करने ही पड़ते हैं। कहा जाता है कि अगर यह सब नहीं किया गया तो मरने वाले को सद्‌गति नहीं मिलती। उसकी आत्मा भटकती रहती है। ऐसी ही एक रिवाज पितृ को पानी देने का है। लोग लोटे में पानी ले कर बीच रास्ते में, नदी किनारे, पीपल के पेड़ में पितृ को तृप्त करने के लिए पानी डालते हैं। एक बार संत एकनाथ जी कौतुक करते हुए नदी के जल में उतर गए और अंजुरी से दक्षिण दिशा में पानी उलेचने लगे। संत की विशिष्ट रीति से हैरान हो कर किसी ने पूछा, ''अरे एकनाथ, आप यह क्या कर रहे है?''

संत एकनाथ जी ने कहा, ''मैं अपने खेत की सिंचाई कर रहा हूं।''

यह सुन कर सवाल करने वाले को हैरानी हुई। उसने पूछा, ''आप नदी के बीच में खड़े हो कर अंजुली से पानी उलेच रहे हो, यह पानी आप खेत में कैसे पहुंचेगा?''

संत एकनाथ ने कहा, ''अरे भाई, मेरा खेत तो नदी के पास है। अगर मेरा पानी मेरे खेत में नहीं पहुंच सकता तो जो तुम लोग अपने पितरों के लिए इतनी दूर से पानी उड़लते हो, तो वह उन तक कैसे पहुंचता होगा? जब आप के पूर्वज जिंदा थे, तब उन्हें पानी दिया होता तो वे संतुष्ट होते। बाकी इस सब का क्या मतलब? इस तरह के वहम् और रीति–रिवाज के पीछे समय और बुद्धि गंवाना है। •

पता : जेड–436ए, सेक्टर–12, नोएडा–201301 (उ.प्र.)
मो. : 8368681336

मन्नो

❑ संध्या ठाकुर रियाज़

खाला बाजार लखनऊ में छोटी–छोटी गलियों से अपने अब्बा का हाथ पकड़े ग्यारह साल की मन्नो लगभग घिसटती हुई तेज़ी से भागी जा रही थी उसके अब्बा के तेज कदमों की चाल का साथ उसके दौड़ते–भागते कदम देने की कोशिश कर रहे थे।

आज सुबह घर में बहुत लड़ाई हुई थी। मन्नो के दो बड़े भाई और दो छोटी बहनें भी थीं। अब्बा रिक्शा चलाते थे, हाथ तंग था, बामुश्किल घर चल पा रहा था। मन्नो के दोनों भाई सरकारी स्कूल जाते थे और वो तीनों बहनें मदरसे में पढ़ने जाती। रोज़ घर में किसी न किसी चीज को लेके झगड़ा होता। इस मुफलिसी से अब्बा–अम्मा इतने लाचार हो गए थे की अम्मा रोज ज़हर खाके मरने की बात करती और ये भी कहते–कहते रोती रहती कि तीन–तीन लड़कियों का क्या होगा ? अभी भी छोटी हैं बड़ी होंगी तो शादी कैसे होगी, हमारे पास तो ज़हर खाने के पैसे भी नहीं बचते।

ऐसा नहीं था कि मन्नो के अब्बा का कोई रिश्तेदार न था। सगे भाई थे जिनका रद्दी का काम धंधा था जिसमें अच्छी ख़ासी कमाई हो जाती थी। एक भाई कसाई का काम करता था। लेकिन सबके सब कम पढ़े लिखे।

ये सब पुश्तैनी ग़रीबी के हक़दार थे, सो पढ़ाई लिखाई से कोई नाता न था। मन्नो के अब्बा बिगड़े किस्म के थे न काम रास आया था न हुनर सीखने का ध्यान आया था ..शौक ही नहीं हुआ कुछ सीखने का। सीखने में क्या मिलना था ... आखिर में जब हर तरफ से रास्ता बंद देखा तो एक पुराना रिक्शा हाथ आया जो ज़िन्दगी जीने के लिए सड़कों पे दौड़ने लगा। जीने का रास्ता खुला लेकिन फिर भी कभी कुछ पूरा न हो पाया सब कुछ आधा–अधूरा था। अब इस बात का गुस्सा कहां उतरे, तो घर आते ही बीवी के साथ झगड़ा और मार पीट, बच्चों की धुनाई वो अलग।

मन्नो के चचा जिनकी रद्दी की दुकान थी, ठीक–ठाक कमा लेते थे लेकिन सिर्फ़ अपने लिए, क्योंकि उनकी बीवी वक़्त–वक़्त पे समझाती रहती थी कि गाढ़ी कमाई का पैसा है फालतू न लुटाते रहना। सो मन्नो, के इन बड़े चचा के दो लड़के थे और चची भी वापिस पेट से थी। चची से अपने घर का काम होता न था आये दिन मन्नो की अम्मा और मन्नो को काम के लिए बुला भेजती। चची होशियार थी उनको पता था कि काम के लिए किसी को लगाएंगे तो पैसा

देना होगा, दिमाग में एक तरकीब कई दिनों से सूझ रही थी कि हर्रा लगे न फिटकरी और रंग चोखा हो जाए क्यूँ न मन्नो को गोद ले ले तो आगे तक के लिये मुश्किल आसान हो जाएगी ...हर दिन बुलाने से अच्छा है, यही रह जाए काम तो दिन रात के होते हैं नाम का नाम और अपना काम। ये बात उन्होंने अपने शौहर से यूँ कहीं की बेचारे तुम्हारा छोटा भाई खुद की कमाई–धमाई है नहीं बच्चों को कैसे पालेंगे क्यूँ न हम मन्नो को गोद ले लें... हमारे पास पल जायेगी और हमारी लड़की है नहीं उनकी दो और हैं मन्नो हमारे साथ काम–काज भी अच्छा सीख जायेगी पेट भर खाएगी–पियेगी .... चचा ने वो बात भी समझ ली जो बीवी ने कही नहीं पैसा बचाने का सीधा रास्ता काम वाली को रखने से अच्छा है और वैसे भी वो अपनी बीवी की शुरू से सुनते थे अब तक अपनी बीवी के मन की बात भी पढ़ लेते थे उन्हें ये सौदा फायदे का लगा।

तो ये तय हो चुका कि मन्नो को हम गोद ले लेते हैं इस तरह भाई का बोझ हल्का हो जाएगा और घर के खर्चे में भी कमी हो जाएगी। मन्नो से किसी ने कुछ पूछा नहीं उससे क्या पूछना सो अभी वो ग्यारह साल की लड़की एक चलती–फिरती बकरी सी लग रही थी, जिसे उसके अब्बा खींचते हुए अपने बड़े भाई के घर बांधने जा रहे थे। हाँ मन्नो को बता दिया गया था कि अब से बड़े चचा तुम्हारे अब्बा हैं। मन्नो बकाऊँ की तरह मुंह खोले... ये सब सुनके चुप थी... मना करेंगी तो अब्बा मारेंगे। घर से निकलते समय अम्मा ने उससे खुदा हाफिज कहा और समझा दिया की बिटिया आज से चचा का घर तुम्हारा घर है... अल्लाह सब ठीक करेगा.. और हां वहां कम से कम पेट भर खाना मिलेगा बड़े चाचा और चची का कहना मानना। शिकायत का मौका न देना आज से वही तुम्हारा घर है।

इस तरह रोती सिसकती मन्नो को अम्मा अब्बा के घर से चचा–चाची के घर छोड़ दिया गया। ग्यारह साल की मन्नो धीरे–धीरे सयानी हो चली। चची उससे वो काम भी करवाती जो उसके बस का न था लेकिन जैसे–तैसे मन्नो गिरती पड़ती...कभी जलती... कभी रोती... कभी ठंड में ठिठुरती...कभी पसीने से नहाई हर काम को हाँ कहती हुयी करती और काम बिगड़ जाने पे मार भी खाती। चची की गालियां तो वो कोई काम धीमे करने पे भी दिन भर सुनती रहती। चचाजात भाई निराले थे जब वो रोती तो हंसते और कहते कि आज मन्नो को जम के मीठे में मिला है। मन्नो को अपने सगे भाई और अपनी अम्मा याद आती लेकिन चची बामुश्किल उसे अपनी अम्मा या भाई बहनों से मिलने जाने देती।

वक्त आगे बढ़ चला, मन्नो भी बड़ी होने लगी। बचपन से मन्नो ने गरीबी देखी थी, लड़ाई देखी थी, गालियां सुनी थीं तो उसे लगता था सब ऐसे ही जीते हैं। लेकिन चाचा के घर में ऐसा नहीं था, चचेरे भाई गाली नहीं खाते थे.. अच्छा खाना अच्छा कपड़ा और स्कूल जाना, जब वो स्कूल जाते तो मन्नो का मन भी करता पढ़ने को... यहाँ तो अब चची ने उसका मदरसा भी छुड़ा दिया था। उन्होंने मन्नो को समझाया की देख कुरआन तो मैं तुझे खुद पढ़ा दूंगी...टेम कहा है कि तू मदरसा जाये और पढ़ लिख के घर ही सम्हालना होता है, कोई फायदा नहीं पढ़ाई लिखाई का।

देखते–देखते चार साल ऐसे ही निकल गए। मन्नो ने अब सब करना सीख लिया था चची को बहुत आराम था, वो अपने फैसले से खुश थीं और अपने शातिर दिमाग पे भी फक्र था, मन्नो की वजह से अच्छी खासी ऐश थी उनकी और अब तो लगभग सब काम मन्नो कर लेती थी। मन्नो ने किसी तरह चची को मनाया की उसको कम से कम मदरसे भेजे... मैं सब काम करके जाऊंगी आके भी सब काम कर लूंगी आप पानी का गिलास भी न उठाना ... दो महीने उनको मनाने की मशक्कत के बाद मन्नो को हज़ार ताक़ीदों के साथ मदरसे जाने दिया गया।

मन्नो के चचेरे बड़े भाई भी बड़े हो चुके थे। कहते हैं माँ बाप का असर औलादों पे होता ही है तो दोनों मन्नो को नौकरानी से ज्यादा न समझते। बची हुई चीज़े उसे खाने को पकड़ा देते... कभी उसका मजाक उड़ाते कभी बेवजह रुलाते ...एक दिन तो हद्द हो गयी उसका दुपट्टा खींच के भागे... मन्नो रोती हुई चची के पास गई। चची ने उल्टा उसे ही डांट लगाई की भाइयों से दूर रहा कर... तू क्यों उनके पास जाती है... बड़ी हो गयी है अहतियात बरता कर लड़की है और इस बात को वही दबा दिया गया। मन्नों ने सिर्फ दुपट्टा खींचने की बात कहीं थी सच्ची बात तो वो भी न कह पाई थी। लेकिन उस दिन से वो सच में अपने ही भाइयों से डरने लगी थी। एक रात तो मन्नो जब सो रही थी तो लगा जैसे उसके होठों पे कोई उंगलियां फिरा रहा है उसकी चीख निकल गयी उठी तो चची का बड़ा बेटा उसकी खटिया से कूद के भागा था। अंदर कमरे से चचा चिल्लाए... क्या हुआ मन्नो... चची ने उनको सुला दिया अरे कुछ नहीं नींद में चिल्लाती है ये ... कितनी बार मैंने भी सुना है आप सो जाओ। उस दिन से मन्नो को अहसास हुआ कि वो वाकई में ''बकरी'' है और

किसी न किसी दिन उसको हलाल कर दिया जाएगा।

ये रात वाली बात छोटे बेटे ने चची को बता दी उनके कान खड़े हो गए। अब उन्हें लगा कि जवान हो चली मन्नो को यहां रखना खतरे से खाली नहीं। कुछ ऊंच–नीच हो जाये तो बेकार में अपने पढ़े लिखे बेटे को जाहिल के साथ निकाह पढ़ाना पड़ेगा। उस दिन उन्हें ये भी ध्यान आया कि कहीं मन्नो के अब्बा के दिमाग में ये ना आ जाए कि मन्नो की शादी मेरे बेटे से करने की बात फैला दें। उनका दिल बैठने लगा। सोचा अब हटाना चाहिए इस बला को लड़का ढूंढो और फुरसत करो इसे... अल्लाह ने तीन बेटे दिए हैं अब छोटा भी 7 का हो गया है। अब जरूरत नहीं किसी की... और होगी भी तो देख लेंगे रख लेंगे कामवाली।

बस उसी रात चची ने चचा को समझा दिया कि मन्नो के लिए लड़का देखो। अब तक मन्नो अपने अम्मा अब्बा से मेहमानों की तरह मिलने जाती थी... उन्होंने भी मान लिया था कि मन्नो पराई हो गयी सो अब मन्नो की शादी हो और कितनी पराई होती ... बस अब्बा ने कहा ठीक है अब कहाँ शादी करना है ये फैसला भी चची और चचा करेंगे उनको हक़ है अब उनकी बेटी हो।

चची को क्या पड़ी थी मशक्कत करने की कि अच्छा लड़का देखें ... आनन–फानन एक लड़का तय किया। चचा की रद्दी की दुकान में सामान लाने और ले जाने वाले पुराने टैम्पो का मालिक इखलाक जिसने अपने अब्बा की जगह अब काम करना शुरू किया था। जो अक्सर दुकान में बैठा दिखता... चचा के साथ है बीड़ी, चाय पीता और जरुरत पे उनका सामान लेके आया–जाया करता था। वो चचा के घर का राशन पानी भी घर दे आया करता था। इखलाख ने मन्नो को भी देखा था जब भी वो सामान लेके जाता था तो चची चाय पानी मन्नो से ही मांगती थी.... बस जब चचा ने खुद उससे अपनी मन्नो से निकाह की बात की तो उसकी बांछे खिल गयीं... खुद से रिश्ता आया था और लड़की तो देख ही रखी थी ... उसने कहा ... अरे चचा कत्ल लेंगे आप बोलो तो ? जो कहोगे कत्ल लेंगें ..... हेहे निकाह की क्या बात है। मन्नो के अम्मा अब्बा भी खुश की चलो बड़े भाईजान ने फर्ज़ निभाया लड़की की वक्त से शादी भी कर दी। मन्नो को शादी की खुशी न थी बस इस बात से खुश थी कि चची के यहां निकल गए। पता नहीं उसके साथ क्या होता और खुद अपने चचा जात भाइयों पे उंगली कैसे उठा पाती.. कोई यक़ीन भी न करता...

अल्लाह ने बचा लिया अच्छा हुआ निकाह हुआ यहां से बची। लेकिन मन्नो बची कहाँ थी आसमान से गिर के खजूर पे अटकी थी। इखलाक सिर्फ़ नाम का इख़लाक था। कुछ महीने खै़र से गुजर गए लेकिन उसके बाद इख़लाक के असली रंग दिखने लगे, वो था तो लखनऊ की पैदाइश लेकिन तहज़ीब का उससे कोई नाता न था नंबर का बदतमीज ... बात बात पे मन्नो को मारने दौड़ता .... बाहर सब की गलियां खाता और घर आके बेवजह मन्नो को रोज मारता। पांच साल ऐसे ही जीते जीते निकले इस बीच एक बार मन्नो पेट से हुयी लेकिन बच्चा भी गिर गया ...कुछ न बदला ... मन्नो ने चची से शिकायत की तो चची ने कहा शिकायत न किया कर अगर किसी दिन इखलाक को पता चला तो वो तुम्हें ऐसे कूटेगा की हड्डी पसली एक कर देगा। मन्नो ने अपनी अम्मा से कहा तो अम्मा ने कहा बिटिया हम तेरे अब्बा की शिकायत कहाँ करें। हम भी तो यही झेल रहे हैं .... तो बेटा ये समझ जैसे हमारा कोई नहीं वैसे तुम्हारा भी कोई नहीं।

मन्नो का कहीं कोई न था, मन्नो ने न बचपन जिया न जवानी। मन्नो जैसी लड़कियां समाज में न जाने कितनी होंगी जिनसे उंगलियां छुड़ा लेते हैं माँ बाप ... ये कह के की अब बस ससुराल और पति सब कुछ है वहीं जीना वहीं मरना। लेकिन अब तो समय बदल चुका था क्यों नहीं कोई ये कहता कि शादी के बाद निभाना तब तक जब तक टूटने का डर न हो वरना लौट आना अपने घर ? क्यों नहीं माँ बाप ये सोचते कि बेटियां पराई नहीं होती हैं ? काश बेटियां पराई नहीं होती। मन्नो अपने ही घर में जैसे बेघर होने लगी थी ।

मन्नो का गोरा रंग सांवला और कहीं–कहीं चोट के निशानों से काला हो गया चला। अब तो उसे चोट खा के भी चोट नहीं लगती थी ... न रोने पे आंसू निकलते थे.. अब समंदर धीरे–धीरे सूख गया था... उसके अंदर सिर्फ़ रेत थी जो रिस रही थी।

मन्नो जहाँ रहती थी आसपास की लड़कियां जो पड़ोसी थीं या उसके दर्द को समझ सकती थी दोस्त बन गयी थी और पड़ोस में रहती औरतों ने कई बार उसे समझाने की कोशिश भी की लेकिन आगे आके किसी ने कभी न रोका न टोका ... अब मियां बीवी के मामले में ज्यादा कोई नहीं पड़ता था। उसकी पड़ोसी औरतों ने मन्नो की तकलीफ देख के उफ्फ़ तो की लेकिन ज़ाहिल इखलाक को कौन अपने मुंह लगाता। एक दिन हद हो गयी इखलाक पे न जाने कैसा भूत सवार था वो चूल्हे की आग लेके मन्नो पे झपटा था उस दिन मन्नो पहली बार घर का दरवाजा खोल

के बाहर भागी थी... बाहर पड़ोसियों की कुछ औरतों ने उसे बचाया था। उस दिन मन्नो ने अपना मुंह खोल दिया वो सबके सामने बोली कि मुझे तलाक चाहिए नहीं रहना साथ। औरतों ने भी जब हद पार होते देखा तो उसका साथ दिया कि सही बात है... कैसा मर्द है, हर दिन बीवी को मारता पीटता रहता है... उस दिन इख़लाक की भद्द उड़ी लोगों ने पिछले दिनों के किस्से भी कह डाले ... इख़लाख मन्नो को खींच के घर ले जाये इससे पहले मन्नो ने ऐलान कर दिया कि वो सड़क पे भीख मांगेगी लेकिन अब नहीं रहना ऐसे शौहर के साथ, और इस फैसले पे वो अटल रही ...इतना हंगामा हुआ की चचा चची अम्मा अब्बा सब आ गए ... सबने उसे प्यार से समझाने की... डाँट के समझाने की... धमकी देके समझाने की ... हर तरीके से उसे ताबे में लाने की कोशिश की लेकिन मन्नो जैसे दुःखों से इतनी भर चुकी थी कि उसके अंदर किसी की कोई बात पहुँच ही नहीं रही थी।

जैसे–तैसे रात इखलाक के घर बितानी थी उसने तय कर लिया था कि बस अब आर या पार जब अपने ही अपने नहीं... किसी ने उसका साथ कभी भी नहीं दिया तो बस अब अल्लाह का साथ चाहिए। मन्नो का साथ पड़ोस की औरतों ने दिया ... मौलवी के सामने गवाही दी कि हर दिन मार खाती है .. कोई गलत काम भी नहीं किया... पाक दामन मन्नो को ''खुला'' की इज़ाजत मिल गयी। लेकिन ''खुला'' के बाद क्या करेगी...वो कहाँ जाएगी। उसके सगे माँ बाप इस बात से डरे हुए थे और उन्होंने खुद ही मन्नो को साफ कह दिया कि बेटी गलत कर रही हो... अकेली हो गयी तो हमारे पास भी अब कैसे रह पाओगी ''खुला'' लेने से पहले सोच लो कैसे जियोगी ? इससे अच्छा होगा कि इस जिद्द को छोड़ दो।

मन्नो के अंदर कोई फीलिंग नहीं थी कहते हैं इंसान के अंदर उतना ही पानी होता है जितना इस जमीन में अल्लाह ने दिया है लेकिन मन्नो बंजर हो चुकी थी। सूखी बंजर बिना किसी अहसास के बस उसे अपनी इस जमीन से कट के हट जाना था भले ही उसका वजूद खत्म हो जाये। आगे क्या होगा कैसे जियेगी या मर जायेगी... उसका दिमाग आगे का कुछ सोच ही नहीं पा रहा था बस वो जैसे इस पल में ठहर गयी थी।

अगले कुछ दिनों में उसके जितने अपने थे सबसे उसे भर भर के तंज और नफरत के साथ हर बुरी बात सुनने को मिली और जितने पराये थे कुछ ने अपनी बीवियों को ताकीत दी कि देखो जो अपने शौहर की नहीं वो न घर की न घाट की .... और कुछ ने कहा– सही किया कितना सहना है और अब इससे बुरा क्या होगा उस लड़की के साथ। सो मन्नो वो पेंटिंग बन चुकी थी जिसे सब अपने पॉइंट ऑफ व्यू से डिस्क्राइब करते हैं लेकिन पेंटिंग पर इसका कोई असर नहीं पड़ता। मन्नो को ''खुला'' मिल गया और उसी दिन वो सड़क पे पड़ी थी शौहर ने उसका समान उठा के फैंक के उसके मुंह पे मार के उसे घर से बाहर कर दिया। अब ? अब क्या।

मन्नो ने अपने आप को अपनी ज़िन्दगी को समेटा और मस्जिद के बाहर आके बैठ गयी.. कुछ उसे जानते थे कुछ उसकी कहानी से उसके साथ हुए हादसे से जानने लगे थे चर्चा का विषय बन गयी थी मन्नो। एक बुजुर्ग ने उसे सलाह दी कि यतीमखाने चली जाओ बिटिया। रास्ता भी बता दिया और एक नाम भी दे दिया कि जाओ जाके मिलो।

मन्नो ताज़िन्दगी अपनों के बीच यतीम थी। उसे यतीमखाने में जाने से गुरेज नहीं था। मौलवी साहब का परचा साथ लाई थी जगह मिल गयी। बचपन की यतीम मन्नो यतीमखाने की हो गयी लेकिन अब उसे यतीम मरना नहीं था ....इस वक़्त एक छत की ज़रूरत थी.. मेहनती मन्नो जिसको सिर्फ काम करने के लिए रोटी और छत मिलती थी वो यतीमखाने में रहते हुए भी वहीं काम करने लगी। सच्ची और मेहनती मन्नो को वहां दो छोटे बच्चे मिले जिन्हें उनकी माँ लायी थी लेकिन पांच महीने पहले वो मर चुकी थी, ऊपरी काम के अलावा उन दोनों बच्चों का ध्यान रखने की जिम्मेदारी भी मन्नो को दी गयी। मन्नो ने उन्हें भी संभाल लिया..चची के बच्चे को सँभालने का तर्जुबा था उसको।

मन्नो ने सोचा था अब यतीम नहीं रहना है ज़िन्दगी में कुछ अपना अपने लिए करना है यतीम खाने में काम करने से कुछ पैसे भी मिले कभी कोई आता तो जकात के नाम पे कुछ कुछ सभी को दे जाता तो मन्नो ने कुछ पैसे जमा किये और बहुत ही सस्ता मंदा जूते पोलिश करने, कुछ सफाई का सफेद जूते की पोलिश अलग अलग तरीके की वो सब खरीद ली और यतीमखाने से निकल के पास वाली उसी मज्जिद में बाहर जा के बैठ गयी थी जहाँ पहली बार घर से निकाले जाने पे पनाह ली थी वहां पास में सब जूते उतार के मस्जिद के अन्दर जाते थे।

मन्नो ने मस्ज़िद में उतारे गए जूतों–चप्पलों को न केवल संभाल के रखना शुरू किया बल्कि उनकी पॉलिश... उनको धो के साफ करना भी शुरू कर दिया। धीरे–धीरे लोग उसे अपने हिसाब से पैसे देने लगे, कुछ लोगों ने इस

बात का ऐतराज किया लेकिन बाद में उसकी सादगी और अच्छा काम देख के नजर अंदाज कर दिया। धीरे–धीरे कुछ लोग अपने कपड़े के जूते लाये और उसे दिए कि इन्हें धो के रखना शाम को ले लेंगे। मन्नो ने कभी काम के लिए ''न'' कहना नहीं सीखा था उसने जूते धोए और उसकी पॉलिश लगा के चमका भी दिए। बस फिर क्या था धीरे–धीरे आसपास के लोगों को भी मन्नो के इस काम का पता चलने लगा और जो काम करने से सब हिचकिचाते थे वो काम मन्नो ने अपना लिया था।

मन्नो ने एक मोची को अपने साथ शामिल कर लिया अब वो फटे जूते सिलवा भी देती.. पॉलिश करती और चमका के वापिस करती। धीरे–धीरे लोगों ने समझ लिया की मन्नो को इस तरह के कामों के कितने पैसे देने चाहिए ...देखते देखते सबने रेट खुद व खुद तय कर दिया। मन्नो को ये काम जैसे अल्लाह के घर में अल्लाह ने सुझाया था। वो जी जान लगा के इस नेक काम में लग गई जहां लोग पैसे भी देते और दुआएँ भी देते।

सबसे ठुकराई मन्नो ने अपने आप को सहारा दे दिया था। यतीमखाना जहाँ था उसके पास ही एक छपरा जैसा कमरा... बहुत छोटा सा यूँ ही पड़ा था... कचरे से भरा उसने पूछ के कि किसका है... जिसका था उससे किराए पे ले लिया। उसके मालिक ने सोचा वैसे ही कचरा घर बना है लोग आ आके अपने अपने घर का कचरा फेंक जाते हैं इसी बहाने सफाई हो जाएगी उसने कम किराए पे दे दिया। मन्नो मस्जिद से जूते लाके वही अपना काम करती सुखाती चमकाती और वापिस मस्जिद में देने आ जाती।

जिस काम में मेहनत हो मालिक हमेशा उस काम में बंदे की मदद करता है। लोगों को पता चला कि मन्नो की दुकान है तो अब जूते चप्पल खुद व खुद चलके उसकी दुकान पे आने लगे मतलब मन्नो का काम रेंगने लगा था। यतीम खाने से वो दोनों बच्चे जिन्हें मन्नो ने संभाल लिया था वो मन्नो को अम्मा मासी कहते और यतीमखाने से उसके पास आ जाते। चूंकि सब आसपास था तो किसी को कोई ऐतराज न था।

इखलाक के घर से निकाले जाने के बाद और जब उसके अम्मा अब्बा ने, न ही चचा–चची ने उसे रखा था तो सबने सोचा था कि न जाने इस लड़की का क्या बनेगा भीख मांगेगी शायद सड़को पे और किसी दिन हमें सुनने में आएगा कि मन्नो मर गयी। लेकिन ऐसा न हुआ मन्नो जीने लगी थी...सांस भी लेने लगी थी... अन्दर सूखी रेत का बंजरपन थोड़ा कम हो चला था अब सुकून का पानी उसकी नसों में बह रहा था... सब सहने के बाद आज उसके शरीर में इतना पानी था कि अल्लाह का नाम लेते ही सूखीं आँखों से बहने लगता था। शुकराने की नमाज़ पढ़ते–पढ़ते थकती न थी मन्नो। सबने उसके काम से चाहा था उसे सच्ची मोहब्बत कभी किसी ने नहीं दी थी लेकिन आज यतीम खाने में मिले वो दोनों पाँच–छः साल के बच्चे उसके गले लग के चिपक जाते तो वो न जाने कितनी देर यूँ ही आँखें बंद करके बैठी रह जाती। मन्नो की ज़िन्दगी उम्मीद के पर लगा के चल पड़ी... मन्नो ने सपने में भी नहीं सोचा था कि कभी ऐसा होगा। उसे तो लगता था वो किसी दिन यूँ ही मार खाते–खाते मर जाएगी उसे पता था मरते–मरते ज्यादा दिन नहीं जिया जाता। लेकिन मन्नो जीने लगी थी। उसी टूटे कमरे को ठीक कर के एक घर बन गया। लड़कियां वैसे भी बचपन से घर बनाने की कला में माहिर होती हैं। मन्नो का घर भी बन गया रात में घर कहलाता दिन में जूते की दुकान। दोनों बच्चों की ज़िम्मेदारी उसने ले ली सबने उसका साथ दिया किसी ने ऐतराज नहीं किया। अब यतीमखाने का सुबह सबेरे सफाई का काम जिसके पैसे उसे मिलते और दिन में अपना काम। वक्त आगे चल रहा था मन्नो की जिन्दगी भी जीने लगी थी।

वो साफ शलवार कुर्ता पहने दुपट्टे को सर पे डाले अपने उन्हीं दोनों बच्चों का हाथ पकड़े धीरे–धीरे उनके स्कूल की तरफ बढ़ रही थी... तभी उसे लगा जैसे वो खुद अपने ही बगल से गुजर रही हो...हाँ खुद मन्नो...ग्यारह साल की मन्नो अपने अब्बा का हाथ पकड़े घिसटती हुई चली जा रही है और रोते–रोते अब्बा से कह रही है कि नहीं जाना चचा के घर हम अपने घर रहेंगे...अब्बा सुनो न...सुनो न अब्बा हमें अपनी अम्मा के साथ रहना है...अब्बा सुनो न मन्नो... मन्नो ये सोच के जैसे सहर गयी...बच्चों का हाथ पकड़े चलते–चलते ही वो पलट के पीछे देखती है...ग्यारह साल की मन्नो घिसटती हुई अब भी अब्बा की उंगली पकड़े... अगली गली मुड़के कहीं खो चुकी थी।

मन्नो ने एक लंबी सांस ली...दुपट्टा ठीक किया बच्चों को अपने करीब चिपकाया और आगे बढ़ गयी उसने सोच लिया था अब मुड़ के नहीं देखेगी। •

पता : यमुना नगर वेलफेयर हाउसिंग सोसायटी,
लोखंडवाला, अंधेरी वेस्ट, मुंबई–400053
मो. : 9821893069

ठहरी हुई मुस्कान

❑ पवन चौहान

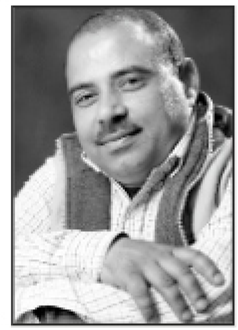

हरीश खुश था। यह उसकी वर्षों की मेहनत का परिणाम था। उसने हर कमज़ोर कड़ी का बड़ी ही सफाई से ब्रेनवॉश किया था। गांव के लगभग सभी खेत ईटों के लिए पट्टे पर दिलवा दिए थे। सदियों से अनाज सौंपने वाली यह ज़मीन अब ईंटें उगल रही थी। हरीश को तय हुआ कमीशन और ईंट भट्ठे में मुंशी की नौकरी मिल चुकी थी। इस आठ पढ़े को और क्या चाहिए था, भला! अब चाहे बादल बरसे या न बरसे, उसकी जेब का भरा रहना पक्का था।

गांव के बीच से जाने वाली सड़क के दूसरी ओर की ज़मीन तो कई वर्षों पहले से ही ईंटें उगल रही थी। इस हिस्से ने अनाज से जैसे रिश्ता ही तोड़ दिया था। इस भूरे रंग के समतल इलाके के सब पेड़–पौधे काटे जा चुके थे। यह ईंट सुखाने में बाधा जो पैदा करते थे। लेकिन हां, पूरी जमीन के बीचोबीच पीपल का एक ठूंठ जरुर खड़ा था जिसकी ऊपरी जड़ें काटी जा चुकी थीं। बस, भूल से उसे काटना शेष रह गया था। शायद धार्मिक मर्यादा ने हाथ रोक दिए थे। यह ठूंठ अभी भी अपने भीतर सांसे भरने की जद्दोजहद में लगा हुआ था। टहनियों में हर बार नए पत्तों के लौट–लौट आने से इसका अंदाजा लगाया जा सकता था। यह पेड़ आस–पास के गांव में सबसे बड़ा और पुराना था। इसकी टहनियों की बनावट ही ऐसी थी कि इस पर पींगें हमेशा लटकी रहती थीं। आते–जाते राहगीरों का यह पक्का ठिकाना था। इसके नीचे रखे प्याऊ सबकी प्यास बुझाते थे। फसल का काम करते हुए किसान इस पेड़ की छाया में बैठना पसंद करते थे। इस पेड़ के नीचे साल भर में न जाने कितनी ही चौपालें सजती थीं। न जाने कितने ही अहम् फैसलों का यह ठूंठ गवाह रहा है।

यही नहीं, इसने न जाने कितनों की दिल की बातें, उनके दुख, उनकी खुशी, उनकी हिम्मत, गांव के लिए कई योजनाओं पर चर्चाएं, उत्सव व त्यौहारों की रूप रेखाएं, घरों की गुत्थम–गुत्थियों को अलग–अलग अंदाज में अलग–अलग व्यक्तियों से देखा व सुना है। कईयों की बेवकूफी भरी बातों पर वह गुस्सा भी हुआ है और हंसा भी खूब है। उन वीभत्स योजनाओं से सहमा भी खूब है। बहुत बार चोरों ने इसके नीचे बैठकर अपना–अपना हिस्सा भी तय किया है और इसकी घनी टहनियों की शय में पुलिस की हथकड़ी से भी बचे हैं। ऐसी

करतूतों से यह स्वयं को शर्मिंदा भी महसूस करता रहा। मीना को यह अच्छी तरह से जानता–समझता था। वह हर रोज पानी का घड़ा भरकर यहां रखती थी। यह मीना के चोरी हुए गहनों का पता भी उसे देना चाहता था लेकिन यह हो न सका। उसके इशारे कोई समझ नहीं पाया। उस दिन मीना ने पानी का अंतिम घड़ा भरकर कुएं में छलांग लगा दी। इन गहनों के लिए रोजाना पड़ने वाली मार, झगड़े और ससुराल पक्ष का उसे ही दोष देना, अब उसकी सहनशक्ति से परे था। किसी ने भी उसकी एक न सुनी। क्या करती बेचारी! ठूंठ बहुत चीखा–चिल्लाया कि गहनों का चोर कोई और है। लेकिन कोई फायदा न हुआ। गांव में नंदू वह पहला व्यक्ति था जो सबसे पहले फौरन गया था। सभी गांव वालों ने इसी पेड़ के नीचे इकट्ठे होकर उसे विदाई दी थी। उसे शुभकामनाएं सौंपी थी।

अब तो इस हिस्से में बसंत की खूबसूरती और पतझड़ के आने का पता ही नहीं चलता। इस हिस्से की मुस्कान ठहर–सी गई है। फसल की जगह यहां अब कच्ची ईंटों की छोटी–लंबी आयताकार सुराख़ लिए दीवारें सजी रहती हैं। यह दीवारें मौसमों के कदमों में ही जंजीरे नहीं बल्कि आपसी रिश्तों में भी बाधा थी। इतने सारे पेड़ों के कट जाने से अब गांव से सामने के नेशनल हाइवे पर दौड़ती गाड़ियां साफ दिखाई देने लगी थीं। कुछ लोग इस दृश्य को अपने विकास का प्रतीक मानने लगे थे। यह पेड़–पौधों रहित सफाचट पीले–भूरे रंग का हिस्सा कुछ ऐसा दिखता था जैसे किसी के सिर के एक तरफ के बाल औहरे से गायब हो गए हों।

जिस जमीन को बचाने के लिए गांव के बुजुर्गों ने प्रोजेक्ट वालों से बगावत की थी, जिसे बचाने के लिए वे दिन–रात सर्दी में ठिठुरे थे, पैदल कई मील दूर उपायुक्त कार्यालय और अन्य अधिकारियों के दफ़्तरों व नेताओं के चक्कर काटे थे, चिंता में कई–कई दिनों तक उनके हलक से रोटी का निवाला उतरने की हिम्मत नहीं कर पाया था, वही जमीन आज चंद रुपयों की झूलती लार से भीग चुकी थी। अबकी बार इस लार के बहाव ने दूसरे किनारे को भी छू लिया था। कच्ची सड़क के दूसरी ओर के लोग भी अपनी जमीनों का सौदा करने से जरा भी नहीं हिचकिचाए। कुछ कागजों पर हस्ताक्षर करवाकर उनकी ज़मीन अगले पंद्रह वर्षों के लिए ले ली गई थी। सभी खुश थे और आज दलाली की पहली किस्त पाकर शराब के नशे में खूब झूम रहे थे। आज मुंह पर कई बेकसूर जानवरों का स्वाद भी चढ़ा था। रात भर जुंए में खूब रुपये लूटते–बनते रहे। यह सिलसिला तब तक चला जब तक जेबें हल्की न हो गईं।

अब तो रोज़ ही घरों में, चौराहे पर और चलते–फिरते भी भट्ठे की जमीन को लेकर चर्चाएं गर्माने लगी थीं। गांव का व्यवहार ही बदल गया था। कुछ समय में ही वे अपने को कुबेर का रिश्तेदार मानने लग गए थे।

"भला कोई कैसे इस तरह से अपनी ज़मीन का सौदा कर सकता है? जिस जमीन ने आज तक इनकी पीढ़ियों को पाला–पोसा, वे कुछ रुपयों की ख़ातिर ऐसा नहीं कर सकते?" विकास हैरानीपूर्वक बोला।

"लेकिन ऐसा हो चुका है विकास। सभी कॉंट्रैक्ट साइन कर चुके हैं।"

"कॉंट्रैक्ट तोड़े भी तो जा सकते हैं यार।"

"परंतु यह तो तभी संभव है न, जब कॉंट्रैक्ट साइन करने वाले राजी हों!"

"क्यों नहीं होंगे दिलीप! हम मिलकर उन्हें समझाएंगे। जिन खेतों को बचाने के लिए हमारे बुजुर्गों ने अपनी जान की परवाह तक न की, अनपढ़ होकर भी समझदारी वाला कार्य किया। उनकी कुर्बानियों को आज की यह पीढ़ी क्या यूं ही भूला देगी? ... नहीं, यह नहीं हो सकता। हम इन खेतों को यूं बिकने नहीं देंगे।"

"मैं इस बार तुम्हारा साथ नहीं दे पाऊंगा विकास।" बुझे मन से दिलीप ने कहा।

"पर क्यों?"

"क्योंकि जमीन के इस सौदे में मेरे अपने भी शामिल हैं। मैं उनके खिलाफ़ नहीं जा सकता। वे यही समझेंगे कि मैं उनकी तरक्की पचा नहीं पा रहा हूं।"

"कैसी तरक्की यार! तुम यह क्या कह रहे हो? इसमें तरक्की जैसी बात तो मुझे कहीं भी नजर नहीं आती। वर्ष भर की दोनों फसलों की पैदावार, साथ ही पशुओं के लिए हरे व सूखे घास, और पेड़ों से जो लकड़ी निकलती है, उसकी कीमत को भी इसमें जोड़ें तो हम ईंट भट्ठे से मिलने वाले रुपयों से ज़्यादा ही कमा लेते हैं। जमीन भी उपजाऊ बनी रहती है और हम हर तरफ की हरियाली से भी खुशहाल बने रहते हैं। नकदी फसलें वैसे भी खूब कमाई दे रही हैं। यदि उसकी कमाई भी जोड़ दें तो..."

"...लेकिन इसके लिए पसीना बहाना पड़ता है, उसका क्या?"

"दिलीप, यही तो मेन कारण है, इस तरह के गलत फैसले तक जाने का।"

आज विकास चाहे जो मर्ज़ी तर्क देता लेकिन दिलीप के दिमाग तक कोई भी बात पहुंचने वाली नहीं थी। रुपयों की दथियों को देखकर उसका भी तो मन डोला था इस लार की छुअन तो वह भी चाहता था।

''तुम्हें इससे क्या? तुम्हारी तो खुद की नौकरी है। गुजारा चल रहा है। हम काम करेंगे तो दिहाड़ी पाएंगे वरना...।"

विकास दिलीप की इस बात से हैरान था। उसने सोचा नहीं था कि उसका सबसे प्रिय साथी उससे यह सब कहेगा। "दिलीप, काम हम भी करते हैं यार। तभी हमें पगार मिलती है। बस, इतना भर जरूर है कि सबकी कमाई के साधन अपने–अपने हैं। लेकिन कमाना सबको ही पड़ता है। पर... ख़ैर, तुम मेरी बात छोड़ो और हालात को समझने की कोशिश करो। देखो दिलीप, अपनी दिहाड़ी से तुम घर का खर्च चला लेते हो। अनाज खेतों से मिल जाता है। पशुओं के लिए घास का इंतज़ाम भी यहीं से ही हो जाता है। साथ ही घर का शुद्ध भरोसे वाला दूध–घी खाने को मिल जाता है। फिर कुछ आमदनी तुम्हारी दूध की ध्यानगी और घी से हो जाती है। यदि तुम सोचते हो कि छह महीने में जमीन के प्रति बीघा से मिलने वाले इन सत्रह–अठारह हजार रुपयों से खूब तरक्क़ी कर लोगे तो यह तुम्हारा भ्रम ही है। यहां सबके पास ज़मीन है ही कितनी। एक–दो या फिर तीन या ज्यादा से ज्यादा पांच बीघा तक ही न! ये रुपये कब, कहां और कैसे खर्च हो जाएंगे, तुम्हें पता भी नहीं चलेगा। एक बात मैं और बता दूं तुम्हें। ईंटें बनाने के बाद जमीन को पहले जैसी उपजाऊ बनाने के लिए तुम्हें जो सालों लगेंगे, उसका क्या? फिर तुम क्या करोगे? और तो और, बाद में जब यह जमीन सभी लोगों में बंटेगी तो उस समय सही पैमाइश के लिए जो लड़ाइयां होंगी वो अलग। मैं शहर के पास वाले गावों में इन हालातों को क़रीब से देख चुका हूं। वे लोग भी ईंटों के लिए जमीन देने से पहले जितने खुश थे, बाद में उससे भी ज्यादा दुखी हुए। रिश्तों में दरारें पड़ गईं। यह ईंट भट्ठे की सारी कमाई बाद में याद आएगी। जिन पेड़–पौधों की हरियाली से हमारा गांव चहकता है, उनके कटते ही हम अपनी ज़मीन से कटते नज़र आएंगे। दूसरी तरफ वाले हिस्से के हालात तो तुम वर्षों से देख ही रहे हो। जब खेत ही न होंगे तो घास कहां से आएगी? फिर या तो पशु आवारा छोड़ दिए जाएंगे या बेच दिए जाएंगे। घास खरीदने लायक रुपये तो तुम्हारे पास होंगे नहीं। दूध, दही के लाले पड़ जाएंगे। यदि फिर से इन्हें खरीदना हो तो..."

दिलीप अबकी बार कुछ नहीं बोला।

"...और यदि मैं सही सोच रहा हूं तो देखना, इस तरह से ये ईंट भट्ठे वाले धीरे–धीरे तुम सबको लालच में फंसाकर एक दिन यहां ईंट भट्ठा भी लगा ही लेंगे। और यह भी मुमकिन है कि तुम्हारी ज़मीन ही तुमसे हथिया लें। देखना तब, गांव के हालात कितने ख़राब हो जाएंगे! सारा माहौल ही बदल जाएगा। गांव में हर तरफ झुग्गी–झोंपड़ियां ही नज़र आएंगी और उनके आस–पास वही टट्टी–पेशाब की दुर्गंध होगी। अनजाने लोग होंगे। तब तुम क्या करोगे? सड़क की दूसरी तरफ का हाल तो तुम जानते ही हो। और दूसरी बात, चिमनी से निकलने वाला धुआं इस गांव को दूषित तो करेगा ही, साथ ही साथ ईंटे ढोने आई गाड़ियां, तांगों का दिन–रात का शोर इस शांत गांव को अशांत भी कर देगा। जब इनकी संख्या इस तरफ भी बढ़ेगी तो यह दुर्गंध और गंदगी ज्यादा परेशान करेगी। और सुनो तुम, दूसरे प्रदेशों से आए इन अनजान लोगों की भीड़ में क्या हमारी मां–बहनें, बेटियां सुरक्षित रह पाएंगी? शायद, इस पर मुझे तुम्हें ज्यादा कुछ बोलने की आवश्यकता नहीं है।"

बहुत देर तक यह बहस, उलझन और समझाइस चलती रही। दिलीप विकास पर भड़क गया और उसकी नौकरी को लेकर ताने देता रहा। दूसरी तरफ, जब विकास हरीश को भी समझाने गया तो हरीश सीधे लड़ने पर उतारू हो गया।

विकास पहली दफा अपने गांव से एक भरी उदासी के साथ शहर वापिस लौट आया। यह वह विकास था जो गांव आने के बहाने तलाशता था। शहर से सैकड़ों मील दूर गांव का शांत व स्नेहिल स्वभाव उसमें नई ताज़गी और ऊर्जा का संचार करता था। विकास एक पढ़ा–लिखा व सुलझा नौजवान था। नौकरी लगने से पहले जब वह गांव में था तो वह गांव की मूलभूत ज़रुरतों के लिए संबंधित अधिकारियों के पास गांव की हर फरियाद लेकर पहुंच जाता था। आज गांव में ज्यादातर सुविधाओं के होने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष

रुप से विकास की बड़ी भूमिका रही है। पांच वर्ष पहले शहर में लगी उसकी नौकरी के चलते उसका ज्यादातर समय शहर में ही कटता था। अपनी गांव वाली ज़मीन उसने गांव के ही जरूरतमंद प्यारु को बीजने के लिए दे रखी थी।

विकास इस बार गांव आते ही ज़मीन के इस झमेले में ऐसा उलझा कि हमेशा की तरह इस बार वह अपने सभी साथियों से मिल ही नहीं पाया। न ही गांव की उस खुली मनपसंद जगह पर बैठकें ही हुईं और न ही उसमें कोई आपसी दु:ख–सुख, न ही कोई भविष्य की कोई योजना और न ही कोई नाच–गाना ही हुआ। वह तो बस अपने गांव वालों के इस एक गलत फैसले का सोच–सोचकर हैरान था।

उधर हरीश अब ज्यादा सक्रिय हो गया था। रुपयों का आकर्षण इस कदर बढ़ा कि जमीन देने के विरोधी अब देने वालों से बात नहीं कर रहे थे। गांव दो धड़ों में बंट गया था। दूसरा, इसका एक फायदा यह हुआ कि वर्षों से एक–दूजे से मुंह फिराए कट्टर दुश्मन भी अब साथ चलने लगे थे। कोई मजबूरी में तो कोई लालचवश एक–दूसरे की देखा–देखी में। उधर विकास के खेतों की आस–पास की जमीन कटती जा रही थी, जिस कारण विकास की ज़मीन एक ऊंचा–सा टीला बनकर रह गई थी।

विकास के यूं एकदम चले जाने से किसी को कोई ज्यादा फर्क नहीं पड़ा। सब अपने जश्न में मग्न थे। ग़रीब आदमी ने पहली बार इस तरह से बिना मेहनत के रुपयों को देखा था। जिनके पास कम ज़मीन थी, वे यही सोच रहे थे कि उनके पास ज्यादा क्यों नहीं है! जिनके पास थोड़ी ज्यादा थी, वे सोच रहे थे कि उनके पास और ज्यादा क्यों नहीं है। सब इसी फेर में उलझे थे। कुछ बहनों ने तो अपने ससुराल से कई दिनों की लंबी छुट्टी भी ले ली थी। वे अपने हिस्से की बनने वाली रकम का पूरा हिसाब लेने मायके पहुंच गईं थीं। इस गांव में नौकरीपेशा लोग आज भी बहुत कम थे। ज्यादातर मिस्त्री, पेंटर और बेलदार ही थे। पूरे दिन भर के हाड़–तोड़ परिश्रम के बाद कुछ रुपये बनते थे लेकिन वे भी पूरे नहीं मिल पाते थे। उनको या तो ठेकेदार हड़प लेता या फिर काम करवाने वाला व्यक्ति बेवजह कुछ नुक्स निकालकर काट लेता। उनकी मेहनत का पूरा आज तक उन्हें नहीं मिला। उनका शोषण पहले भी होता था और आज भी बदस्तूर जारी था। मंहगाई ने तो कभी–कभी इन्हें भूखा रहना भी सीखा दिया था। दिनभर का परिश्रम इनकी बहुत–सी मूलभूत जरूरतों को भी पूरा नहीं कर पाता था। बच्चों की पढ़ाई, कपड़े और खाने का भी सही से कभी इंतजाम नहीं हो पाता था। ऐसे में शराब इनका एक बड़ा सहारा थी। इनके गाढ़े की साथी। ईंटे बनाने आए मजदूरों से यह कमाई खूब बढ़ गई थी। लगभग हर मजदूर अपनी थकान मिटाने को रोज शराब पीता था। इनमें कई औरतें भी शामिल थीं। एकदम से बढ़ी इस शराब की बिक्री ने तो कइयों का धंधा ही चमका दिया। सबके अपने–अपने ग्राहक बन गए थे। इस कमाई से घर की औरतें भी अब अपने लिए कुछ रुपए बचाकर रखने लगी थीं।

रोज़ाना शाम होते ही इस हल्की पहाड़ी पर बसे गांव का माहौल ही बदल जाता। ये जाने–पहचाने अजनबी अब हर किसी घर में पहुंच जाते। कुछ घरों से इन्हें शराब की बोतल पकड़ाकर भेज दिया जाता तो कोई इन्हें अपने घर में ही पिलाने बिठा देते। दिलीप और उसके साथियों को यह बात जरा भी सही नहीं लगी। गांव के अन्य कई लोग भी इसके विरोध में थे। दिलीप ने गांव वालों को समझाया भी कि अनजान लोगों को अपने घर में इस तरह प्रवेश देना सही नहीं है। लेकिन बहुत कम को ही यह बात समझ आई। रूपयों की इस अंधी दौड़ में इस बात के उन्हें मायने ही समझ नहीं आ रहे थे और न ही वे समझना चाहते थे।

समय बीतता रहा और ये अजनबी स्थानीय लोगों के साथ उनके घर के काम के बहाने या फिर दारू के बहाने अच्छे से मिलने–जुलने लगे। पता चला कि ईंट भट्ठे में कुछ उदपण लड़के स्थानीय लड़कियों और महिलाओं को छेड़ते हैं। लाज से मरी इन लड़कियों और औरतें में कुछ बताने की हिम्मत नहीं जगी। लेकिन उस दिन गांव के युवाओं ने कॉलेज से घर लौटती लड़कियों के साथ इनकी ये हरकतें देखीं तो उनका गुस्सा फूट पड़ा। इन्हें खूब कूटा गया। बात पुलिस तक पहुंच गई। पीने वाले नाराज़ न हो जाएं, आमदनी न घट जाए। इसलिए गांव के कुछ चालाक धूर्त लोगों ने बीच–बचाव करके इन शरारती लड़कों को बस चेतावनी दिलवाकर छुड़ा दिया। यह नरम रवैया इन बिगड़ैलों के लिए बड़ी हिम्मत बना। फिर एक दिन वही हुआ जिसकी किसी को उम्मीद न थी। गांव के दो घरों से एक साथ दो लड़कियां गायब हो गईं। देर रात पता चला तो सबका नशा उतर गया। पूछताछ चलती रही लेकिन सब बेकार। दोनों घरों में रोण–पीटण पड़ गया। गांव के लड़के

अपने–अपने दुपहिया वाहनों में अंधेरी रात में ही इधर–उधर खोज के लिए निकल पड़े। राहत की खबर आई जब एक लड़की बस स्टैंड में मिल गई। लेकिन दूसरी का कोई पता नहीं चल सका। पुलिस में रिपोर्ट दर्ज की गई। पहली लड़की बार–बार उस भट्ठे वाले लड़के के साथ ही जाने की ज़िद करती रही। लेकिन कौन मां–बाप चाहेगा कि कॉलेज पढ़ने वाली उनकी बेटी सारी उम्र कभी इस इलाके तो कभी उस इलाके में ईंटे डालती फिरे। दूसरी को पंद्रह दिन बाद दूसरे राज्य से पकड़कर लाया गया तो थोड़ी राहत मिली। फिर जिस बात का पता चला तो सबके रौंगटे खड़े हो गए। उसे आगे किसी को बेचा जा रहा था।

यह सब कुछ होते हुए भी कुछ लोग अभी भी बाज नहीं आए थे। वे इनकी झुग्गियों में ही दूध के साथ शराब की ध्यानगी पहुंचाने लग गए थे। यही नहीं, जिस बची हुई लस्सी को गांव वाले पहले एक–दूजे को मुफ्त बांटते थे, अब वह भी बिकने लगी थी। बाजारवाद की पूरी धमक गांव में दिखाई देने लगी थी। रुपयों की इस भूख में कोई सही–गलत समझना ही नहीं चाह रहा था। जिनके हिस्से में यह वाला कार्य नहीं था उन्होंने गांव के एक ओर खोखे बना लिए। इनमें मुख्यतः चाय, बीड़ी, सिगरेट व खैनी की कई किस्में मिलती थीं। दिलीप ने भी झुग्गियों के नजदीक सब्जी, राशन आदि रोजमर्रा की चीजें रख दीं। दुकान बढ़िया चल पड़ी। उसने अब अपना रंग–रोगन का काम छोड़ दिया था।

दिन बीतते रहे और गांव अपनी गति थामे रहा। लेकिन इस रफ़्तार में टूटन ज्यादा थी। सारे खेतों की मिट्टी से रोजाना लाखों ईंटें बनती। जिन पेड़ों से लकड़ी, घास और फल मिलते थे, वे एक–एक करके कट रहे थे। भट्ठे के मालिक ने अभी कुछ ही शौचालय बनाकर इतिश्री कर ली थी। वे इन लोगों की संख्या के हिसाब से बहुत कम थे। गर्मी में तो कच्ची सड़क के इस तरफ से भी और उस तरफ से भी आने वाले इन झोंकों से गांव में जैसे घुट ही जाता था। मि. वर्मा ने और शौचालय बनाने का भरोसा तो दिया था लेकिन यह कब बनेंगे, इसका जवाब भविष्य के गर्भ में था।

समय की नज़ाकत को देखते हुए हरीश ने भी मि. वर्मा से रुपये उधार लेकर अपनी दुकान शुरू कर दी। सारा सामान रख दिया ताकि कोई किसी दूसरी दुकानों से कुछ न ले पाए। चाय का जिम्मा अपनी पत्नी को दे दिया। अपनी मुंशी की नौकरी के चलते वह जब मजदूरों द्वारा बनाई गई ईंटे गिनता तो मजदूरों को अपनी दुकान से राशन खरीदने के लिए मजबूर करता। यदि कोई उससे नहीं लेता तो वह उनकी ईंटों की गिनती में गड़बड़ी कर उन्हें नुकसान पहुंचाता। मजबूरीवश, ज्यादातर अब उसकी ही दुकान से सामान लेने लगे थे। फिर वह दिन भी आया जब दिलीप को अपना खोखा बंद करना पड़ा। उसे दोबारा से अपने रंग–रोगन का काम करना ही सही लगा। दो और खोखे भी बंद हुए लेकिन उन्होंने बेलदारी नहीं की बल्कि झुग्गियों में जा–जाकर शराब को बेचना शुरू कर दिया। बेलदारी से ज्यादा फायदा उन्हें इसमें हो रहा था। पूरा दिन दुकान में बैठकर जो कमाई वे करते थे वे उसे यहां कुछ ही समय में कर लेते थे। बाकी फिर सारा दिन मजे करते! पूरे गांव का माहौल ही बिगड़ गया था। लड़कियां, औरतें शाम ढलते ही अपने घरों में दुबक जाया करती थीं।

इस बीच गांव के लिए दो बुरी खबरें आईं। जमीन के ज्यादातर हिस्सों से अब पत्थर निकलना शुरू हो गए थे। दूसरी ख़बर पर किसी को यकीन ही नहीं हो पा रहा था। यकीन किया भी कैसे जा सकता था? यह यकीन करने लायक था ही नहीं। अभी विकास की उम्र थी ही कितनी! चौंतीस वर्ष की उम्र में ही हार्ट अटैक! यह ख़बर पूरे गांव को गम में डूबो गई। वह सबका प्यारा था। बेशक, रुपयों के लालच ने बहुतों को उसके खिलाफ कर दिया था। लेकिन वह था सबके दिलों में राज करने वाला। दिलीप तो कई दिनों तक कुछ बोला ही नहीं। वह मौन हो गया था। वह दहाड़े मार–मार कर रोना चाहता था लेकिन उसके मुंह से आवाज ही नहीं निकल पा रही थी। वह एक बुत जैसा बन गया था।

इस ख़बर से पूरा गांव थम–सा गया था। एक अजीब–सी खामोशी कई दिनों तक गांव में पसरी रही। साथ ही, इस चर्चा ने भी खूब ज़ोर पकड़ा कि यह सब कोरोना के इंजेक्शन के साइड इफेक्ट्स हैं जो छोटी उम्र भी नहीं देख रहा है। परंतु एक बार फिर धीरे–धीरे गांव अपनी गति में लौटने लगा था। ईंटे बनना शुरू नहीं हो सकीं। जब ईंटे नहीं बनी तो रुपये नहीं मिले। खेतों की ऊपरी परत की ईंटे बन चुकी थीं। अब नीचे वाली पथरीली ज़मीन उनके हिस्से वापिस आई थी। हरे–भरे लहलहाते खेतों वाला यह समतल क्षेत्र अब की बार अपने साथ छोटे–बड़े गड्ढे और उबड़–खाबड़ हिस्से लिए मुंह बाये खड़ा था। फिर मि. वर्मा को कोर्ट में ले जाने की योजना बनी। लेकिन उन्हें जल्द ही

पता चल गया कि उनका कॉंट्रेक्ट ठगी का एक पुलिंदा मात्र था। उन्हें बताया कुछ था और लिखा कुछ और गया था। ... वे ठग लिए गए थे। गांववासी भरे गुस्से में बिचौलिये हरीश के पास पहुंचे। लेकिन वह स्वयं आठ पढ़ा भला इन लिखी बातों को क्या जानता? उसने अपनी मजबूरी बताकर पल्ला झाड़ लिया। गांववालों का उबाल शांत नहीं हो रहा था। वे अपने साथ हुई ठगी पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे।

आज सभी ठूंठ के पास एकत्र थे। काफी समय बाद अपने पास इतने लोग वह एक साथ देख रहा था। यह भीड़ उसे बार–बार अपने अतीत में ले जा रही थी। लोगों के माथे पर खिंच आई चिंता की लकीरें ठूंठ को भी चिंता में डाल रहीं थी। इन दो वर्षों में दूसरी ओर की जमीन में बस नाममात्र के ही पेड़ शेष थे। ज्यादातर काटे जा चुके थे। कुछ की जड़ें बची थीं। कुछ स्वयं ही गिर चुके थे। इन सब में दूसरी ओर खड़ा यह पुराना पीपल का ठूंठ आज भी था। इसकी ओर जाने वाला रास्ता बीच–बीच से टूट चुका था। रास्ते की इस मिट्टी से बनी ईंटे न जाने किस–किस घर की दीवारों में सज चुकी होंगी। पीपल के आस–पास की लगभग सारी मिट्टी हटाई जा चुकी थी। वर्षों पहले सरकारी ज़मीन पर उग आया यह ठूंठ अब अतिक्रमण के चलते साथ की ज़मीन वाले ताऊ ने हथिया लिया था। उन्हें यहां सिर्फ अपने रुपयों की दथी ही दिख रही थी। जहां यह ठूंठ खड़ा था, जमीन के इस टुकड़े को उनके पुरखों ने न जाने किस–किस के पास फरियाद करके सड़क के बनते समय छुड़वाया था। लेकिन इस पीढ़ी को उनकी इस सकारात्मकता से क्या लेना–देना। ठूंठ की लगभग सारी जड़ें कट जाने के बावजूद भी परिवार के जिम्मेदार बुजुर्ग की भांति बच गए दूर–पास के उन सभी नए–पुराने पेड़ों को हौसला देता हुआ प्रतीत होता था।

पीपल के पास खड़े सभी एक–दूजे से अपना–अपना हाल सुनाकर मन हल्का कर रहे थे। एक ओर खड़े दिलीप के भीतर लगातार एक द्वंद्व चल रहा था। यह उसके भीतर एक हिम्मत भरता जा रहा था। वह इस द्वंद्व में स्वयं को ढूंढ रहा था। विकास के कहे को बार–बार याद करता था। बहुत से किसान अपनी जमीन वापिस लेना चाहते थे। कुछ अभी हां और न के चुनाव में ही उलझे थे। ज़मीनों को दोबारा समतल करना और फिर उनमें अपनी–अपनी सीमाएं तय करना आसान न था। मेड़ों का कोई निशान शेष न था। बिना पटवारी के अपनी ज़मीनों को ठीक से चिहिन्त नहीं किया जा सकता था। उधर मि. वर्मा की पटवारी को झोल निशानदेही की तारीख को आगे से आगे टाल रही थी।

बहुत अरसे बाद इतनी संख्या में गांव के बड़े–बुजुर्ग, युवा और महिलाओं को देखकर ठूंठ अपने आपको एक अलग ही ऊर्जा से लबरेज पा रहा था। आज गांववालों ने उसे पहले–सा सम्मान दिया था। वह अपनी इस खुशी को साझा करने हेतु अपने आस–पास नज़र दौड़ाता है। परंतु स्वयं को अकेला पाकर इस खुशी को अपने ही भीतर समेट लेता है। बेशक, उसके आधार पर बैठने लायक पहले जैसी जगह नहीं बची थी। लेकिन यह आज तक के किसी भी बड़े निर्णय का गवाह रहा है। वह फिर से उन पुराने दिनों की ओर दौड़ लगाता है। कितनी ज्यादा रौनक रहती थी पहले इस चौपाल पर। और इस रौनक में पेड़ों की एक भरी–पूरी बस्ती शामिल रहती थी। कितने मज़ेदार थे वे दिन। हर आने–जाने वाला जैसे इससे बात करता था। यहां दो घड़ी विश्राम करता था। जो पक्षी दिन–रात इस पर बैठे रहते थे, आज वे सब इससे किनारा किए हुए हैं। बस, कभी–कभार इसे छूकर निकल जाते हैं। अकेला घायल खड़ा यह ठूंठ कई दुःख अपने साथ लिए हुए है।

बैठक की ख़बर मिलते ही अपने सारे काम छोड़कर बिन बुलाए ही सबसे पहले मि. वर्मा यहां पहुंच गए। गांववालों की परेशानी और उनकी बौखलाहट में शामिल होते हुए मि. वर्मा नेतायी अंदाज़ में बोले, "मेरे प्यारे भाई और बहनों। मुझे माफ करना मैं बिन बुलाए आपकी इस बैठक में आ पहुंचा। दरअसल, मैं आपकी परेशानी को अपनी परेशानी मानता हूं। यदि मैं आपके लिए कुछ कर पाऊं तो मेरा सौभाग्य होगा। शायद आपकी किस्मत खराब थी। तभी ये पत्थर आपकी ज़मीनों से निकल आए। ऐसा कई बार हो जाता है। लेकिन अब इसे पहले जैसी उपजाऊ बनाने में वर्षों लगेंगे। पत्थरों की छंटाई, समतल करने के साथ, बीज, खाद व बीजाई आदि का खर्च। ऐसी बहुत–सी परेशानियां आपको थका देंगी। परंतु आप चिंता न करें। मैं आपको दुःखी नहीं देख सकता। आप पिछली सारी बातों को भूल जाएं। मेरे पास अब भी आपके लिए एक शानदार योजना है। पत्थर या अन्य किसी बात का आपकी देय राशि पर कोई खतरा नहीं रहेगा। बस, रूपये थोड़े कम मिलेंगे।"

"कम! ...कैसे?" कुछ आवाज़ें एक साथ गूंजी। कुछ भीतर ही दबी रह गईं।

"कम इसलिए क्योंकि मिट्टी तो अब काम की रही नहीं। अब इन्हें समतल करके यहां सिर्फ़ ईंटे ही डलवाऊंगा। और बच गई ज़मीन पर एक ईंट भट्ठा तैयार करूंगा। हां, ईंट भट्ठे में जिसकी जमीन जाएगी उसे पहले से ज्यादा रुपये दूंगा।"

यह बात सुनकर उलझन–सुलझन की एक लंबी खुसर–फुसर चालु हो गई। जमीन में काम नहीं करने वाले मन से तैयार थे। बहुत न की स्थिति में थे। तभी भीड़ में से एक रौबदार आवाज बाहर निकली, "हम नहीं देंगे। बिल्कुल भी नहीं।"

मि. वर्मा इस आवाज से हल्का–सा कांपे। वर्मा के साथ खड़ा हरीश उचक–उचक कर इस आवाज को ढूंढने लगा। बिना समय गंवाए स्थिति को भांपते हुए मि. वर्मा अपनी बात को पूरा करते हुए मुस्कुराकर कहने लगे, "मैंने तो आपके फायदे की बात कही है। देखिए, ईंट भट्ठा लगेगा तो रोजाना कई ट्रैक्टर, ट्रक, टैंपो जब ईंटें लेने आएंगे तो इससे आप लोगों का चाय–पानी, खाने–पीने, कोल्डड्रिंक्स, जूस आदि की बिक्री बढ़ेगी। (थोड़ा हलके स्वर में) ...और एक खास बात, शराब का काम खूब चलेगा। आमदनी बढ़ेगी। यह आपके लिए बेहतर मौका है। एक बात और भी ... जिसकी ज़मीन ईंट भट्ठे में जाएगी, उसको जब भी अपना घर या अन्य कुछ भी बनाना होगा तो मैं उसे दस प्रतिशत छूट पर ईंटें दूंगा। और सुनो ...जिसकी जमीन पर ईंट भट्ठा लगेगा, उसको मैं पिछली राशि से डेढ़ गुणा ज्यादा दूंगा। एक बात और..."

इससे पहले कि मि. वर्मा कुछ कह पाता दिलीप भीड़ से अलग पीपल के नीचे आगे जाकर हल्की–सी ऊंचाई पर खड़ा हो गया। उसके साथ कुछ और भी ग्रामीण थे। "यह बातें अपने पास ही रखें वर्मा जी! अब क्या रही–सही कसर भी इसी मिट्टी से पूरी करोगे? आप यहां से तुरंत चले जाएं। हमें अपनी जमीन नहीं देनी है। आप कब तक हमें ठगते रहोगे? क्यों इन्हें लालच में फंसा रहे हो? बहुत हुआ अब।"

दिलीप की बुलंद आवाज को सुनकर पीपल में हलचल हुई। टूटी चौपाल पर खड़े दिलीप के चेहरे पर पानी की कुछ बूंदें आ गिरीं। दिलीप एक नजर आसमान की ओर डालता है लेकिन इस खिलखिलाती धूप में उसे एक छटाक भी बादल कहीं नज़र नहीं आता। वह इन बूंदों को हाथ से चेहरे पर मल देता है और अपनी बात को जारी रखता है, "... गांव के बीचोबीच लगने वाले इस ईंट भट्ठे की मार हम कई वर्षों तक झेलते रहेंगे। याद रखना, मि. वर्मा जिस लालच को देकर हमारी जमीन को अभी पट्टे पर लेने वाले हैं वही जमीन बाद में तुम्हारे किसी काम की नहीं रहेगी। यह भी हो सकता है कि उसके बाद मि. वर्मा तुम्हारी इस जमीन को तुमसे ठगकर सदा के लिए हथिया लें..."

मि. वर्मा दिलीप की बात सुनकर गुस्से से लाल–पीले हुए जा रहे थे। लेकिन कुछ कह न पाए।

"...आप सभी से मैं यही कहूंगा कि यह ईंट भट्ठा हमारे लिए सही नहीं है। इससे ज्यादा तो हम अपनी जमीनों से ही कमा लेंगे। इसका लगना हमारी बची–खुची पहचान भी मिटा देगा। एक अलग ही दुनिया का जन्म होगा जो हमारी दुनिया से जरा भी मेल नहीं खाएगी। यहां एक अलग ही समाज बनेगा जिसमें कई अजनबी चेहरे शामिल होंगे। और ये चेहरे हर सीजन में बदलते रहेंगे। हमें अपनी मिट्टी व अपनों से दूर करते रहेंगे। यही सही वक्त है संभलने का..."

भीतर ही भीतर कई कदमों में हलचल हुई और वे दिलीप के साथ खड़े हो गए।

"...विकास देखो, हमें अपनी गलती का एहसास हो गया है। बस, एक बार तुम लौट आओ यार!" कहते–कहते दिलीप की आंखें भर आईं।

"हमने उसे बड़ा निराश किया था..." भीड़ में से एक बुजुर्ग महिला का उदास स्वर गूंजा।

कुछ क्षणों तक एक चुप्पी सबके बीच पसरी रही। खामोशी से सभी एक–दूजे के चेहरों को ताकते रहे। कुछ आंखों ही आंखों में इशारे हुए। हां या ना के भंवर में फंसे शेष कदम यकायक दिलीप की ओर चल दिए। बहुत थोड़े से अपनी जगह रूके रहे कदम अपने आप को अकेला महसूस कर रहे थे। आज ठूंठ की ठहरी हुई मुस्कान लौट आई थी। इस तपती गर्मी में वह अपनी जीवित बची टहनियों पर सजी पत्तियों को जोर–जोर से हिलाकर, बैठक में शामिल सबको ठंडाई भेजने का ईमानदार प्रयास करने लगा था। •

पता : गांव व डा. महादेव, तहसील–सुन्दरनगर,
जिला–मण्डी, हिमाचल प्रदेश–175018
मो. : 98054 02242

फेसबुक का प्रेम

❑ पायल सोनी

वक्त के साथ हर चीज बदल जाती है, मगर कुछ यादें दिल के कोने में हमेशा वैसी ही बसी रहती हैं। वे यादें, जो कभी खुशी देती हैं, कभी एक मीठा दर्द। अनुराग के लिए भी फेसबुक सिर्फ टाइम पास था, लेकिन उसने कभी नहीं सोचा था कि एक रिक्वेस्ट उसकी जिंदगी को इस कदर बदल देगी।

अनुराग की जिंदगी में फेसबुक नया था। दोस्तों से जुड़ने का एक नया ज़रिया। उत्साह से भरा हुआ वह प्रोफाइल बनाता है, तस्वीरें अपलोड करता है और पुराने दोस्तों को खोजता है। तभी उसकी नज़र एक नाम पर ठहर जाती है— शालिनी। एक अजनबी चेहरा, मगर उसकी आँखों में एक अजीब सी कशिश थी। उसने झिझकते हुए 'फ्रेंड रिक्वेस्ट' भेज दी।

कुछ घंटों बाद फोन की घंटी बजी— ''शालिनी ने आपकी फ्रेंड रिक्वेस्ट स्वीकार कर ली है।''

हौले से मुस्कुराते हुए उसने इनबॉक्स खोला और पहली बार एक अजनबी से बात की।

''हाय, मैं अनुराग।''

''हाय, मैं शालिनी।''

बस, इतना ही। मगर यह शुरुआत थी एक नए सफ़र की।

दिन गुजरते गए। चैट से बातें, बातों से फोन कॉल, और फिर वीडियो कॉल। दो अजनबी कब एक—दूसरे की जिंदगी बन गए, पता ही नहीं चला।

अनुराग को शालिनी की बातें, उसकी हँसी, उसके ख्वाब—सब कुछ अपना सा लगने लगा था। जब वे बात करते, तो दुनिया की हर परेशानी, हर उलझन कहीं खो जाती।

एक दिन, उसने हिम्मत जुटाकर पूछ ही लिया—

''शालिनी, क्या हमने कभी सोचा था कि ये दोस्ती यूँ ही रहेगी या...''

फोन के दूसरी तरफ हल्की हँसी गूंजी।

''पागल... मैं भी यही सोच रही थी।''

उसके शब्दों ने अनुराग के दिल की धड़कनें तेज कर दीं। वह जान गया था कि यह सिर्फ़ दोस्ती नहीं, कुछ और था। कुछ गहरा, कुछ अनकहा।

इंटरनेट के इस रिश्ते को अब हक़ीकत में बदलने की बेताबी थी। आखिर, भावनाओं की गहराई को महसूस करने के लिए सिर्फ़ शब्द काफी नहीं होते।

अनुराग ने फैसला किया– ''मैं अहमदाबाद आ रहा हूँ।''

टिकट बुक हुई, दिल की धड़कनें तेज हुईं। जब ट्रेन स्टेशन पर रुकी, तो वह घबराया हुआ था।

''कैसी होगी शालिनी? क्या सच में वो उतनी ही खूबसूरत होगी जितनी तस्वीरों में दिखती है? क्या वो मुझे देख कर मुस्कुराएगी?''

लेकिन इन सवालों के जवाब उसे नहीं मिले।

कैफे में बैठा अनुराग, बार–बार घड़ी की ओर देख रहा था। हर गुजरते पल के साथ उसका दिल बेचैन हो रहा था। तभी फोन बजा।

''अनुराग, मैं नहीं आ सकती...''

उसकी आवाज काँप रही थी।

''क्यों? शालिनी, क्या हुआ?''

''आज नहीं... शायद कल...''

फोन कट गया। अनुराग की उम्मीदें, उसके ख्वाब, सब कुछ अधूरा रह गया।

बारिश की बूंदें खिड़की से टकरा रही थीं, और उसके मन में एक तूफ़ान उमड़ रहा था।

घर लौटते समय उसकी हालत वैसी थी, जैसे कोई बिना लड़े ही जंग हार गया हो। हिम्मत जुटाकर उसने फेसबुक खोला और एक आख़िरी सवाल लिखा–

''क्यों किया ऐसा?''

कुछ पलों बाद जवाब आया–

''अनुराग... मैं शादीशुदा हूँ। मेरे दो बच्चे हैं...''

एक झटके में पूरा संसार बिखर गया। जिसे वह अपनी धड़कनों में महसूस कर रहा था, वह किसी और की थी।

हाथ से फोन छूट गया। आँखों में धुंधलापन उतर आया।

''कैसे विश्वास कर लिया मैंने? कैसे बिना देखे, बिना जाने, किसी को अपना मान लिया?''

गहरी साँस लेते हुए उसने फेसबुक खोला और धीरे–धीरे अपनी फ्रेंड लिस्ट से शालिनी को हटा दिया।

बारह साल बाद...

समय गुजर चुका था। अनुराग की जिंदगी अब बदल चुकी थी। उसके पास अब एक खूबसूरत परिवार था– एक पत्नी, जो उसकी हर खुशी का ख्याल रखती थी, और दो प्यारे बच्चे, जो उसकी दुनिया थे।

एक शाम, चाय की चुस्की लेते हुए उसने फेसबुक खोला। पुराने पोस्ट स्क्रॉल करने लगा।

शालिनी का नाम कहीं नहीं था... मगर उसकी यादें जहन में ताज़ा थीं।

पत्नी मुस्कुराते हुए पास आई–

''क्या सोच रहे हो?''

अनुराग ने हल्की मुस्कान दी।

''कुछ नहीं... बस यूँ ही, सोशल नेटवर्किंग की दुनिया में कुछ चेहरे ऐसे होते हैं, जो सिर्फ स्क्रीन पर रह जाते हैं... लेकिन जिंदगी के साथ नहीं चलते।''

उसने फोन बंद कर दिया और अपने बच्चों के साथ खेलने में खो गया।

सोशल मीडिया हमें कई रिश्ते देता है–कुछ सच्चे, कुछ झूठे, और कुछ जो हमें ज़िंदगी की सबसे बड़ी सीख दे जाते हैं। अनुराग ने भी जाना कि सोशल नेटवर्किंग, सिर्फ सोशल के लिए होती है, पर्सनल के लिए नहीं। •

पता : बी 4/23, गोमती नगर विस्तार,
सेक्टर–1, लखनऊ–226010
मो. : 9140385403

जीवन की नई राहें

❑ रीता दास राम

शिल्पा और विभोर दोनों कॉलेज की लिफ्ट में मिले थे पहली बार साथ–साथ। हाँ बिलकुल, कोई संगीत सुनाई नहीं दे रहा था। कोई वायलिन नहीं बज रही थी। फिर भी दोनों ने एक दूसरे को देखा और हल्के आकर्षण के चलते पहले मुस्कान फिर रोज़ ही इधर या उधर दिख पड़ना चलता रहा जो खुशी देता भीतर ही जैसे कुछ पनप रहा था। ऐसे ही बातचीत की शुरुआत हाय–हैलो से होते हुए धीरे–धीरे आगे बढ़ती रही। दोस्ती हुई। क्षणिक मुलाकातों ने पहचान पुरानी की और दोस्ती गहरी हो गई। साल गुजरा। दूसरा साल पूरा होते–होते दोनों प्यार के एहसास में बंधते चले गए।

एक दूसरे के आवास की जानकारी हुईं तो पता चला शहर के एक ही हिस्से में रहते हुए मोहल्ला अलग था। अलग स्कूलों में पढ़ने के कारण कभी मुलाकात नहीं हुईं। दोनों विज्ञान के विद्यार्थी फिर पढ़ाई का बोझ इधर–उधर झाँकने भी नहीं देता। शिल्पा का हँसमुख होना सभी को आकर्षित करता। विभोर की गंभीरता शिल्पा को भा गई। अक्सर होती यूँ ही मुलाकातों में शिल्पा विभोर के दोस्तों से ज्यादा बतियाती और विभोर खामोश उसे देखा करता। विभोर के दोस्त इस बात को जानने लगे थे। यही कारण था वे अक्सर शिल्पा को बातों में फँसा कर लगाए रखते। विभोर इस बात से बेखबर दोस्तों से बतियाती शिल्पा में खोया रहता। शिल्पा की सहेलियाँ उसे ताना मारती और शिल्पा भीतर ही भीतर दिल हारती चली जाती। एक प्यारा सा संबंध कौतूहल से भरी अपनी हरियाली समेट रहा होता।

दोनों में बातचीत बहुत कम होती लेकिन दोनों की एक दूसरे के लिए आतुरता ने दोनों के दोस्तों को जैसे सब कुछ बता दिया। दोनों अपने–अपने दोस्तों के साथ मिलते और देखते ही देखते दोनों के दोस्त एक–एक कर कन्नी काट लेते। दोनों को इस तरह बात करने का अवसर मिलता जो झिझक के मारे खुद मिलने का अवसर ले नहीं पाते थे। दोस्तों की दरियादिली ने दोनों को मिलाया। बात यहाँ तक पहुँची कि अब दोनों अक्सर बाइक में शहर के बाहर घूमने

निकल जाते। कहीं रेस्टोरेंट में बैठकर खूब गपशप करते। कभी मूवी तो कभी दोस्तों के साथ नाइट आउट करना उनकी खुशी को दुगना करता। दोस्तों के साथ ने उन्हें मौका दिया और वे दोनों करीब आते चले गए। दोनों का साथ ऐसा बढ़ा कि हवा भी दोनों को एक साथ बिना छुए नहीं जा पाती। दिन बदलते गए और रातों ने कई बार पलकों को खुले देखते हुए ही सुबह का आगमन देखा। शिल्पा और विभोर का प्यारा सा संबंध परवान चढ़ने लगा। दोनों एक दूसरे से बेइम्तिहा मोहब्बत करने लगे।

विभोर शिल्पा से चार साल बड़ा था। उसे पढ़ाई में साथ देता। उसे गाइड करता। जहाँ विभोर कॉलेज पास कर चुका वहीं शिल्पा के दो साल बचे थे। वह विभोर से अपनी प्रॉब्लम्स शेयर किया करती। विभोर के गैप लेने ने उसे अपने उम्र के दोस्तों से थोड़ा पीछे कर दिया। शिल्पा और विभोर दोनों अभियांत्रिक तकनीकी की पढ़ाई कर रहे थे। विभोर ने मल्टीनेशनल कंपनी में जॉब का इंटरव्यू दिया।

प्यार होता ही ऐसा है जो बिछोह से डरता है। यही कारण है जो प्रेमी शादी के बंधन में बंधना जरूरी समझते हैं। समाज की विवाह व्यवस्था प्यार करने वालों को इतना करीब ले आती है कि संबंध कभी–कभी घुटन बन जाते हैं। प्यार सभी घुटन से गुजरने की परीक्षा से गुजरने के लिए भी तैयार होता है जब प्यार सच्चा हो। वैसे विवाह के बाद की सोचता भी कौन है। प्यार की सफलता का मानक है शादी। शादी के बाद का किसको पता होता है। उसकी परवाह भी नहीं होती। बस प्यार में मिलन की ख्वाहिश ही सर्वोपरि होती है।

दोनों बीच–बीच में मिला करते। इसी बीच विभोर के माता–पिता ने शिल्पा के सोसायटी में ही घर शिफ्ट किया। अब दोनों के घर पास ही थे। बिल्डिंग जरूर अलग थी। आते–जाते एक दूसरे को दिख जाते। हाँ, दोनों के घरों में इस रिश्ते का कोई इल्म नहीं था। अमूमन सोसायटी वालों का एक व्हाट्सप ग्रुप होता है जिसमें सभी अभिभावकों के नंबर होते और बातचीत हुआ करती। बस इसी तरह दोनों के माता–पिता एक दूसरे को जानते थे।

प्यार का रिश्ता शादी की मोहर के लिए बेचैन होने लगा क्योंकि शिल्पा के घर दबे–छिपे उसके शादी के बारे में बातें होने लगी। दोनों चाहते कि माता–पिता की भी सहमति मिल जाए लेकिन ये सब इतना आसान भी न था। शिल्पा महाराष्ट्र के रहने वाले मराठी परिवार से थी और विभोर के घर वाले असम के रहवासी थे। दोनों के परिवार हैदराबाद में लिंगमपल्ली एरिया के आदित्य शाइन सोसायटी में रहते थे। यहाँ रहते सभी लोगों को थोड़ी बहुत तेलगू आना स्वाभाविक सी बात थी। भाषा ही दूसरी भाषा वालों को अलग सा पहचान भी देती और अलग होने का आकर्षण भी बनाएं रखती।

शिल्पा जब–जब घर में अपने शादी की बातचीत सुनती परेशान हो जाती। कभी विभोर को बताती, कभी मन ही मन उदास हो जाती। उसे किसी पर बोझ बनना भी पसंद नहीं था। वह ख्यालों में ही विभोर से दूर होने की बात सोचती और कांप कर रह जाती। वह विभोर से बिछड़ जाने की सोच से भी घबराती। मन ही मन सोचने लगती कि क्या कुछ ऐसा करूँ कि विभोर भी मेरा हो और माता–पिता भी मान जाए। जबकि विभोर उसे चिंता नहीं करने की सलाह देता और सब ठीक हो जाने पर विश्वास करने को कहता। घर में शादी की बात के अलावा व्हाट्सप ग्रुप में अभिभावक भी अपने बच्चों की शादी की बात करते और एक दूसरे को सलाह देते, मदद भी करते।

शिल्पा से शादी की बात का जिक्र करते ही वह माँ को मना कर देती और सोचने लगती कि विभोर के बारे आखिर वह माता–पिता को कैसे बताएं। जैसे–जैसे समय बीतता गया घर वालों की कोशिश बढ़ने लगी। वें अक्सर बात उठाते और शिल्पा उखड़ जाती। रोष सा भरने लगा था उसके भीतर। उसे न कहीं बाहर जाना भाता ना किसी से बात करना। उसकी उदासी विभोर से भी छुपी ना थी। दोनों कोई ना कोई जुगत भिड़ाने की कोशिश में लगे रहते। दोस्त भी कोई राह नहीं तलाश पा रहे थे। दरअसल सभी चाहते थे कि बिना मनमुटाव के दोनों के पेरेंट्स 'हाँ' कर दें। यह कठिन कार्य था लेकिन असंभव तो कुछ होता नहीं।

समय गुजरता रहा। दीवाली आई। सोसायटी में

कार्यक्रम हुए। डांस, गाना, संगीत, प्रतिस्पर्द्धा रखी गई। बच्चों, महिलाओं और बुजुर्गों ने उत्साह से भाग लिया। शिल्पा बाहर ना निकल पाई। विभोर के कहने पर भी वह कार्यक्रम में ना जा पाई। वह जब भी उसकी माँ के साथ बाहर जाती कोई ना कोई परिचित मिल ही जाता और ले दे कर शिल्पा की शादी पर बात आकर रुकती। पूछा जाता, "कब बिटिया की शादी कर रहे हो?" यही बात शिल्पा को नागवार गुजरती। उसका घर वालों के साथ आना–जाना जैसे बंद सा हो गया।

शिल्पा की उदासी माँ को खलने लगी। माँ बिटिया की चिंता में घुलने लगी। माँ का मन चाहता कि किसी तरह बिटिया की उदासी दूर हो। विभोर और शिल्पा दोनों अपने–अपने घर में अपने बारे में बताने से कतरा रहे थे। वे अपना असमिया और मराठी होना जानते थे। यह बात ही सिरे से खारिज हो जाने का एक बड़ा कारण हो सकता था। घर में ना शिल्पा बात करती ना ही विभोर कुछ बता पाता। शिल्पा की माँ बेटी के मन की टोह लेने की कोशिश करती और हमेशा असफल होती।

पड़ोसन की बात सुनकर शिल्पा की माँ वाट्सअप ग्रुप में आए दीवाली के कार्यक्रम की फोटो देखती जा रही थी और साथ ही शिल्पा से बात कर रही थी ..

"क्या बात है शिल्पा ! बहुत चुप–चुप सी रहने लगी हो, बात भी नहीं करती हो आजकल ?"

"अरे कुछ नहीं हुआ है माँ, ठीक ही तो हूँ।"

"मैं तेरी माँ हूँ ... तेरी उदासी नहीं पहचानूँगी क्या?" माँ ने पुचकारा।

"ऐसा कुछ भी तो नहीं है माँ...। अब फिर से तुम शादी की बात लेकर मत बैठ जाना।"

"अच्छा, सच सच बताना ... क्या कोई और तो नहीं है तुम्हारे मन में?"

"मतलब?" शिल्पा ने चौंक कर पूछा।

"कोई हो तो बता दो, ... हम भी तो देखें आखिर हमारी बेटी की पसंद क्या है?"

"अच्छा, जैसे मैं बोलूँ और आप मान जाओगे?... क्यों?"

"अरे बता तो सही...।" माँ ने शिल्पा के सर पर हाथ फेरा। माँ के कहने ने शिल्पा को हिम्मत दी और थोड़ी–सा आइडिया भी।

"क्या देख रही हो आप" कहकर शिल्पा ने माँ के साथ व्हाट्सप की फोटो देखनी शुरू की।

"देख शिल्पा बात ना बदल, जल्दी से बता तो तेरे दिल में क्या है? या कोई है जो तुझे पसंद आता हो तो हम बात चलाएं।" माँ का यह कहना था कि शिल्पा ने आव देखा ना ताव झट से माँ के ही फोन में दिखाई देते विभोर के फोटो पर उँगली रख दी और कहा..

"ये कैसा है माँ ?" माँ ने शिल्पा के बताए फोटो को गौर से देखा।

"ये तो बोरा फैमिली का बेटा है। ये लोग तो मराठी नहीं।" माँ ने कहा।

"तो क्या हुआ। लड़का तो है ना माँ।" शिल्पा ने माँ के मन को परखना चाहा।

"हाँ, ठीक है आजकल तो यह सब हो रहा है। धर्म–जात आजकल जैसे कोई मायने नहीं रखते। इस बारे में अब इतना भी कोई सोचता नहीं है। सब आपस में शादी करने लगे हैं।" माँ की बातें सुन शिल्पा का मन बल्लियों उछलने लगा। उसने अपनी खुशी जाहिर ना करते हुए खामोशी बनाएं रखी। माँ ने फिर पूछा "क्या ! सच में इसे पसंद करती हो?"

शिल्पा ने 'हाँ' में सर हिलाया और पापा की आवाज सुनकर चुप हो गई। माँ उठकर कमरे से बाहर पिता से बात करने चली गई।

शिल्पा और विभोर की खुशी का ठिकाना ना रहा जब शिंदे परिवार ने बोरा परिवार से रिश्ते की बात करने के लिए मुलाकात की पेशकश की। विभोर के घर में उससे पूछा गया। उसने खामोश सहमति दी कि 'उसे कोई फर्क नहीं पड़ता'। दोनों परिवार के लोग मिले लेकिन विभोर के नौकरी ना करने पर बात अटक गई। तय हुआ के विभोर पहले नौकरी करें तो बात आगे बढ़ सकती है।

विभोर इंटरव्यू तो दे ही चुका था। मल्टीनेशनल कंपनी में उसकी जॉब लग गई। धीरे–धीरे शिंदे परिवार तक जॉब लगने की बात पहुँची। लड़का–लड़की को देखने–दिखाने का रस्मी तौर–तरीका अपनाना सही समझा गया। बोरा फैमिली के कुछ बुजुर्ग विभोर के साथ शिल्पा के घर उसे देखने आए। माता–पिता के आपसी संवाद के बाद लड़का और लड़की को अकेले बातचीत करने का अवसर दिया गया। शिल्पा और विभोर सभी के सामने एक दूसरे के लिए अनजान ही बने रहे। माता–पिता ने बच्चों को पसंद किया और आगे की बात बच्चों की पसंद पर छोड़ दी।

कुछ समय लेकर दोनों ने रिश्ते के लिए हाँमी भरी। दोनों के परिवार ने इस रिश्ते को सहमति का ठप्पा लगा दिया। शिल्पा और विभोर खुश थे। बरसों का इंतज़ार पूरा हुआ। बात आगे बढ़ती, इसके पहले ही दुःखद ख़बर आई। विभोर के दादाजी का देहांत हो गया। इस दुःखद माहौल में रिश्ते की बात जैसे दब सी गई।

विभोर के घर रिश्तेदारों का आना शुरू हो गया। अंत्येष्टि हुई। तेरहवीं हुई। महीना भर घर उदासी में डूबा रहा। मेहमान जाने लगे। कुछ महीना भर रुके। विभोर की बुआ को विभोर और शिल्पा के रिश्ते की बात पता चली। उसने विभोर की माँ को अपने जात–बिरादरी में शादी करने की सलाह दी और कई लड़कियों के रिश्ते सुझाए। बात विभोर तक भी पहुँची। उसने खामोश रहकर अपनी असहमति ज़ाहिर की। विभोर की माँ ने बेटे के इग्नोरएन्स को समझा और बुआ की बातों पर ध्यान नहीं दिया। शिल्पा की जान में जान आई। विभोर घर में आए मेहमानों से जैसे बहुत सतर्क हो गया, जाने कौन माँ के कान भर दें और सब गड़बड़ हो जाए।

धीरे–धीरे साल बीता। विभोर ने इंक्रीमेंट के चलते दूसरी जॉब स्विच की। शिल्पा ने पढ़ाई में पूरी तरह मन लगाया और अपनी इंजीनियरिंग पूरी की। विभोर की सलाह और गाइडियन्स से उसने नौकरी के लिए अप्लाय किया था। परीक्षा और इंटरव्यू देते रहने ने उसकी राहें खोल दी। शिल्पा भी जॉब करने लगी।

बोरा परिवार ने होने वाली बहू के नौकरी करने पर नाक–मुँह सिकोड़ा। रिश्तेदारों ने विभोर के माता–पिता को भटकाने की लाख कोशिश की। विभोर टस से मस नहीं हुआ वहीं बोरा परिवार से शादी में लेट होने से शिंदे परिवार की बेचैनी बढ़ती रही जिसे शिल्पा ने खामोश रहकर संभाला। शिल्पा और विभोर दोनों हफ्ते में एक बार कहीं बाहर मिलते और घर परिवार की बातों पर डिस्कस करते। दोनों बराबर परिवारों की आंतरिक हलचलों पर नज़र गड़ाए हुए थे।

इसी बीच दोस्तों के साथ दो दिन की पिकनिक में विभोर और शिल्पा ने एक दूसरे से अँगूठी बदल कर अपने रिश्ते पर मोहर लगाई और वापस आते ही परिवारों की सहमति से सगाई की औपचारिक रस्म पूरी की। बोरा परिवार शिल्पा को पाकर खुश हुआ जबकि शिल्पा की माँ चिंतित हुईं, के खानपान रहन–सहन अलग होने के चलते शिल्पा को जीवन भर तकलीफ़ होगी। बेटी जाने कैसे संभालेगी। शिल्पा माँ को आश्वासन देती और विभोर शिल्पा को।

देखते–देखते शादी का दिन भी आ गया। शिल्पा और विभोर के दोस्तों की खुशी का ठिकाना ना रहा। उन दोनों के लिए यह ऐसा प्रोजेक्ट था जिसे बस सफल ही बनाना था। बैचलर पार्टी, संगीत, मेंहदी, हल्दी की रस्म ने दोनों परिवारों की विविधता को नए आयाम दिए। असमिया और मराठा अंदाज देखते ही बन रहा था। जिसे दोनों परिवारों ने खुशी–खुशी स्वीकारा और जीवन की नई राहें निकल पड़ी।

कुछ सालों बाद विभोर की छोटी बहन ने एक पंजाबी मुंडे से शादी की और शिल्पा के भाई ने लंदन की विदेशी लड़की मारग्रेट से शादी रचाई। प्रेम ने प्रेम करना सिखाया, प्रेम को विस्तार किया। भाषा की विविधता और स्थानीय भिन्नता के बावजूद लोगों के दिलों में प्रेम ने अपनी जगह बनाई। •

पता : 2602, टॉवर 8, मैग्नोलिया, रुणवाल फोरेस्ट्स, कांजूर मार्ग पश्चिम, मुंबई–400074

मो. : 9619209272

धीरज

❑ पुष्पेश कुमार पुष्प

मैं यह सोचकर परेशान हो गया कि आज के जमाने में हर किसी पर सहज ही विश्वास कर लेना अपने आपको धोखा देने से कम नहीं है। लोग विश्वास में लेकर ही तो धोखा देते हैं। जैसे मुझे मिला। आज सुबह ही बैंक से फोन आया था कि बैंक में गबन के आरोप में बैंक का चपरासी धीरज गिरफ्तार कर लिया गया। यह वही धीरज था जिसे मैंने अपने एक बैंक मैनेजर मित्र से कहकर चपरासी के पद पर बहाल करवाया था। लेकिन आज जब उसकी कार गुजारी की कथा सुनी, तो मैं दंग रह गया। मैं सपने में भी नहीं सोच सकता था कि धीरज इतना घृणित काम कर मेरी प्रतिष्ठा को दांव पर लगा देगा। मेरा बैंक मैनेजर मित्र मेरे बारे में क्या सोचता होगा? यह सोचकर मैं शर्म से धरती में गड़ा जा रहा था। एक अनाथ को सड़क से उठाकर इंसान बनाया और उसने मुझे कहीं का रहने नहीं दिया। मेरी प्रतिष्ठा दांव पर लगा दी। मुझे अपने आपसे घृणा होने लगी कि आखिर मैंने एक अनजान युवक के चरित्र की जिम्मेवारी अपने ऊपर क्यों ले ली? इन बातों को सोचकर मैं एकदम बेचैन हो गया। अब मैं किस मुंह से अपने बैंक मैनेजर मित्र से मिलने जाऊंगा? मैं उससे कैसे नजरें मिला पाऊंगा? न जाने कितने प्रश्न मेरे मन में कौंध रहे थे।

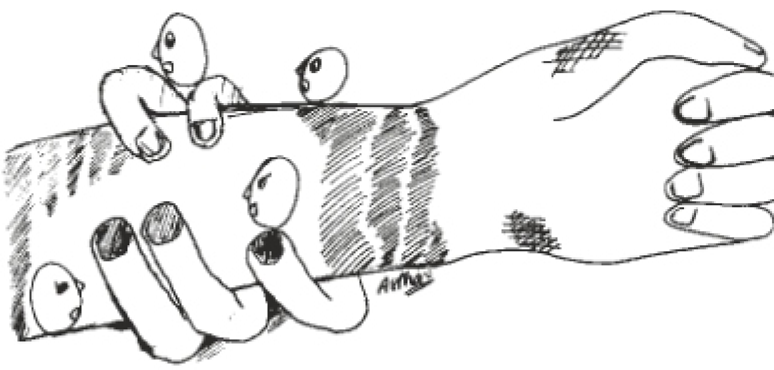

एकाएक मुझे वह दिन याद आ गया, जब मैं किसी काम से बाजार जा रहा था। बाजार के चौराहे पर लोगों की भीड़ लगी थी। मैं भी भीड़ में शामिल हो गया। देखा एक लड़का सड़क पर पड़ा था। पूछने पर पता चला कि भूख के कारण चक्कर खाकर गिर गया है। लोग तमाशबीन बन खड़े थे। कोई उसकी मदद को आगे नहीं आ रहा था। मुझसे रहा न गया और मैं उसे

उठाकर अस्पताल ले गया। अस्पताल में इलाज करते हुए डॉक्टर ने कहा था– "घबराने की कोई बात नहीं। कमजोरी के कारण चक्कर आ गया है। कुछ ही देर में होश आ जाएगा। इसके खान–पान पर ध्यान दीजिएगा।"

और उसके होश आते ही मैं उसे अस्पताल से अपने घर ले आया। पहले उसे भर पेट भोजन कराया। फिर उसका नाम पूछा।

"धीरज।" वह सकुचाते हुए बोला।

"तुम्हारे मां–बाप कहां रहते हैं?" मैंने पूछा।

"मेरा इस दुनिया में कोई नहीं है। बचपन में ही मेरे मां–बाप गुजर गये। उनकी शक्ल तक मुझे याद नहीं। लोगों के काम कर पेट पालता हूं।" वह आंसू बहाता बोला।

उसकी करूण कथा सुनकर मेरे हृदय में उसके प्रति दया का भाव उमड़ आया और बोला– "तुम्हें कहीं जाने की जरूरत नहीं और न किसी के यहां काम करने की आवश्यकता है। इसे अपना ही घर समझो। क्या तुम पढ़ना चाहते हो?"

उसने सिर हिलाकर बोला– "हां।"

मैंने उसका नामांकन एक स्कूल में करवा दिया। स्कूल के शिक्षक ने एक दिन आकर कहा– "धीरज ! पढ़ने में बहुत कमजोर है। कैसे मैट्रिक पास कर पाएगा? मेरी समझ में नहीं आता।"

मैंने उसके शिक्षक से कहा था– "चाहे जैसे भी उसे मैट्रिक पास करा ही दूंगा। बस आप उस पर थोड़े ध्यान दीजिए। बाकी मैं समझ लूंगा।"

उसे मुक्त विद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा दिलवाया। किसी प्रकार बिना अंग्रेजी के मैट्रिक पास कर गया।

एक दिन उसने कहा– "आपने मुझे सड़क से उठाकर आदमी बना दिया। मुझे अपने बेटे जैसे प्यार दिया। आपके इस एहसान को मैं कभी भुला नहीं पाऊंगा। अब मैं कही जाकर कुछ काम करना चाहता हूं। आप पर बोझ नहीं बनना चाहता।"

"जब तुमने मुझे अपना पिता माना है, तो एक पिता के लिए बेटा बोझ नहीं होता। तुम चिंता न करो। मैं तुम्हारी कहीं न कहीं नौकरी अवश्य लगा दूंगा।" मैंने उसे समझाते हुए कहा।

मैंने धीरज को नौकरी दिलाने का वादा तो कर दिया। लेकिन अब मैं सोच में पड़ गया कि इसे नौकरी दिलवाउं तो कहां? इस बेरोजगारी के दौर में नौकरी दिलाना इतना आसान काम नहीं था, जितनी आसानी से मैंने उसे आश्वासन दे दिया। उसे मुझ पर भरोसा था। मेरी बातें सुनकर उसकी आंखें में चमक आ गयी थी। मैं उसके विश्वास को तोड़ नहीं सकता था। मैं उसे निराशा के दलदल में नहीं धकेल सकता, लेकिन आज जहां बेरोजगारों की फौज खड़ी है। ऐसी स्थिति में सरकारी नौकरी दिलवाना काफी कठिन काम है। और फिर इसका परिवार में तो कोई है भी नहीं। बेचारा अनाथ और असहाय है। बिना नौकरी के धीरज इतनी लंबी जिंदगी कैसे व्यतीत कर पायेगा? अंग्रेजी के बिना मैट्रिक पास किया है। आज के जमाने में अंग्रेजी भाषा न जानने वाले को कोई नौकरी भी देना नहीं चाहता। ऐसे में इसे कहां नौकरी दिलवा पाऊंगा? यदि नौकरी न मिली तो इसके साथ कौन अपनी लड़की का विवाह करना चाहेगा! मैं तो धीरज को नौकरी का आश्वासन देकर अजीब धर्म संकट में फंस गया था। मैं इसी चिंता में घुला जा रहा था कि मुझे अपने एक बैंक मैनेजर मित्र का ध्यान आया। मैंने उस बैंक मैनेजर मित्र के पास गया और उससे अनुरोध किया कि वह धीरज को बैंक में चपरासी के पद पर रख ले। वह मित्र मेरे अनुरोध को टाल न सका। उसने धीरज के चरित्र और कार्य कुशलता की जिम्मेवारी मुझे लेने को कहा। मैं सहर्ष धीरज के चरित्र और कार्य कुशलता की जिम्मेवारी अपने ऊपर ले ली। उसे साक्षात्कार के लिए बुलाया गया और मेरा आदमी होने के कारण उसे बैंक में चपरासी के पद पर रख लिया गया। बैंक ने उससे बीस हजार रूपये की जमानत राशि मांगी। वह फार्म लेकर सीधा मेरे पास आ गया। मैंने फार्म पर हस्ताक्षर कर दिया। उस बात को बीते काफी समय हो गया। मेरे बैंक मैनेजर मित्र का तबादला कहीं और हो गया। धीरज अपना एहसान जताने निरंतर आता रहा। लेकिन उससे मेरी मुलाकात नहीं हो पाती थी। मैं

हमेशा किसी न किसी काम से बाहर ही रहता था। यही कारण था कि धीरज मेरे यादों से दूर होता जा रहा था। यों कहें कि मैं उसे भूलता जा रहा था। लेकिन आज बैंक से फोन आते ही उसकी याद ताजा हो गयी।

मैं यह सोचने पर विवश हो गया कि क्या सचमुच धीरज ने बैंक का पैसा चुराया होगा? चुराया भी होगा तो उसके पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होगा? बैंक जैसी मांतवर नौकरी पर आखिर उसने कैसे आंच आने दी? उसके जैसे सेवा भावी, कर्मठ और ईमानदार आदमी ने इतनी बड़ी घटना को अंजाम कैसे दे दिया? मेरी अंतरात्मा बार–बार यही कह रही थी कि धीरज चोरी नहीं कर सकता। कहीं न कहीं कुछ गड़बड़ जरूर है। मुझे उससे मिलना होगा। तभी सच्चाई पर से परदा उठ सकेगा। मुझे अपने आप पर भी गुस्सा आ रहा था कि मैं बिना कुछ जाने समझे उसे धोखेबाज और विश्वासघाती कैसे मानने लगा! जबकि बिना सच्चाई जाने धीरज को चोर या विश्वासघाती कहना गलत होगा।

काफी सोच–विचार के बाद मैं उससे मिलने जेल गया। वह मुझे देखते ही फूट–फूटकर रोने लगा। मैंने उसे सांत्वना देते हुए चुप कराया। वह सिसकते हुए मुझसे कहने लगा– "इतना होने के बावजूद आप मुझसे मिलने आये। मैं बहुत अभागा हूं। मैं आपसे नजरें मिलाने लायक नहीं रहा। आपने एक बेसहारा और अनाथ को सड़क के फुटपाथ से उठाकर पढ़ाया–लिखाया और बैंक जैसे संस्थान में नौकरी दिलवाकर जिंदगी संवार दी। लेकिन आपको मेरे बारे में जानकर दुख अवश्य हुआ होगा। लेकिन मैंने ऐसा कोई काम नहीं किया जिससे आपका सिर नीचा हो। पर परिस्थितियों ने मुझे यह काम करने पर विवश कर दिया। यह बात ऐसी है कि जो न तो कहीं जाती है और न सही जाती है।"

मैंने उसे सांत्वना देते हुए कहा कि मैं समझ सकता हूं कि तुम ऐसा गलत काम नहीं कर सकते हो। अवश्य ही तुम्हारी कोई न कोई मजबूरी रही होगी। आखिर इस सबके पीछे का सच मुझे बताओ। आखिर क्या कारण थे कि तुम्हें इतनी बड़ी घटना को अंजाम देना पड़ा?

लेकिन वह इस बारे में कुछ बताने से कतराने लगा। मेरे बार–बार सच बताने के आग्रह पर उसने कहा– "साहब! आप वादा करें कि यह बात किसी और को नहीं बतायेंगे।"

"तुम्हारा यह सच राज ही रहेगा, धीरज। यह मेरा वादा है।"

धीरज ने चोरी नहीं कि थी, लेकिन नमक का कर्ज उतारने के लिए उसने आरोप अपने ऊपर ले लिया था। धीरज बैंक के कैशियर रमाकांत जी के मकान में रहता था। वह उनके घर का सारा काम कर दिया करता था। इसी सेवा और समर्पण को देखकर रमाकांत जी उसे अपने भाई की तरह मानते थे। वह परिवार के सभी सदस्यों में घुल–मिल गया था। वह उस परिवार का एक सदस्य बन गया था। वह उनके दुख–सुख में सदैव साथ रहता था। आखिर बैंक से रूपये किसने चुराया यह भगवान ही जाने? पर आरोप बैंक के कैशियर रमाकांत जी पर लगा। कैशियर पर आरोप लगते ही घर में कोहराम मच गया। उनकी पत्नी दहाड़ मारकर रोने लगी। उनके जेल जाने की नौबत आ गयी। उनकी चार अविवाहित बेटियां थी। जिनके हाथ अभी पीले भी नहीं हुए थे। घर में आमदनी का कोई अन्य स्रोत भी नहीं था। रामकांत जी की पत्नी भी हमेशा बीमार ही रहती थी। ऐसे में रमाकांत जी के जेल जाने के बाद उनका पूरा परिवार बिखर जाता। यही सोचकर रमाकांत जी धीरज के आगे गिड़गिड़ाने लगे– "धीरज, अब तुम ही मेरे परिवार को बिखरने से बचा सकते हो। मेरे जेल जाने के बाद मेरी चार जवान बेटियों का क्या होगा? मेरी पत्नी जो हमेशा बीमार रहती है, उसका क्या होगा? रूपये मेरे हाथ में होने के कारण आरोप मुझ पर लगा। अब मेरे बचने का कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा है। मैं सच कहता हूं कि मैंने रूपये नहीं चुराये। यह तो ईश्वर ही जानता है। लेकिन मैं निर्दोष होने के बाद भी जेल चला जाऊंगा। मेरी कुंवारी बेटियों और बीमार पत्नी का क्या होगा? वे सभी तो जीते जी मर जायेंगी।"

"मैं आपको किस प्रकार बचा सकता हूं?"

"यदि तुम यह स्वीकार कर लो कि बैंक के रूपये की चोरी तुमने की है, तो मैं जेल जाने से बच जाऊंगा। मैं आरोप मुक्त हो जाऊँगा।"

रमाकांत भाई की यह बात सुनकर मैं एकदम से कांप गया और सोचने लगा कि यह जानकर आपको को कितना दुःख होगा। किंतु मेरी आंखों के आगे कैशियर रमाकांत जी का पूरा परिवार मौत के मुंह में जाता दिखायी दे रहा था। रमाकांत जी के जेल जाने के बाद उनकी चार कुंवारी बेटियों और पत्नी का क्या होगा? शायद उनकी पत्नी शर्म से जहर खाकर आत्महत्या कर लें। यह प्रश्न मेरे मन–मस्तिष्क में कौंध रहा था। रमाकांत भाई का बिखरता परिवार मेरी आंखों के आगे बार–बार आ जाता था। वैसे भी उनके कई एहसान मेरे ऊपर थे। मैं उनके एहसानों तले दबा था। मेरी समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि आखिर मैं करूं तो क्या करूं? एक तरफ रमाकांत भाई का परिवार रेत के महल की तरह भरभरा कर ढहने वाला था, तो दूसरी आप का मान–सम्मान। काफी सोच–विचार के बाद मैंने यह निर्णय ले लिया कि रमाकांत भाई के परिवार को बिखरने नहीं दूंगा। वैसे भी मेरा इस दुनिया है ही कौन? न परिवार न संगे–संबंधी! यही सोचकर मैंने बैंक मैनेजर के पास जाकर अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

"साहब, मैं यह अच्छी तरह जानता था कि चोरी और जेल जाने के बाद मैं किसी को मुंह दिखाने लायक नहीं रहूंगा। लेकिन रमाकांत भाई की चार कुंवारी बेटियां और बीमार पत्नी मेरी आंखों के आगे घूम रही थी। उनके बीच मंझधार में डूबते परिवार को बचाने के लिए यह आरोप अपने ऊपर ले लिया और मुझे सजा हो गयी। मुझे जेल जाने का उतना दुख नहीं है, जितना आपके दिल को ठेस पहुंचाने का। जब मैं आपके बारे में सोचता हूं, तो मेरी रातों की नींद गायब हो जाती है।"

धीरज की इस मार्मिक कथा को सुनकर मेरी अंतरात्मा ने मुझे झकझोर दिया। मैं असमंजस में पड़ गया कि धीरज के इस कार्य को क्या कहा जाय?

मैं धीरज को एकटक निहारने लगा। उसकी निर्दोष आंखें पहले की तरह चमक रही थी। उसका चमकता हुआ चेहरा इस बात का साफ संकेत कर रहा था कि धीरज चोर नहीं हो सकता? धीरज मेरे विश्वास के साथ खिलवाड़ नहीं कर सकता। यह अनाथ और गरीब जरूर है, पर चोर नहीं हो सकता। धीरज ने एक बिखरते परिवार को बचाने के लिए अपने भविष्य की कुर्बानी दे दी। मुलाकात का समय खत्म हो गया। मैं जाने लगा, तो उसने मेरे पांव पकड़ लिए और बोला– "साहब ! आपको मेरे कारण कष्ट हुआ इसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं। मैंने जानबूझकर इस तरह का कृत्य नहीं किया। एक परिवार को बचाने के लिए यह सब करना पड़ा। मैं आपके भरोसे पर खरा नहीं उतरा। इस बात का मुझे दुख है। आप मेरे इस कृत्य के लिए क्षमा करेंगे।"

धीरज की बातों को सुनकर मुझे अपने आपसे घृणा होने लगी। मेरी अंतरात्मा मुझे धिक्कारने लगी कि मैं एक नेक और सच्चे दिल इंसान को चोर और विश्वासघाती समझने लगा। धीरज ने जो काम किया है, शायद ही कोई अन्य इंसान कर पाता। उसने एक परिवार को बचाने के लिए अपने अरमानों की चिता जला डाली। उसके इस महान काम की जितनी भी प्रशंसा की जाय कम ही होगी। इन्हीं बातों को सोचकर मैं पश्चाताप की अग्नि में झुलसने लगा। मैं अपनी गंदी सोच के कारण ही धीरज के बारे में गलत विचारों को जन्म दे रहा था। मैं अपनी गंदी सोच के कारण शर्म से सिर झुकाये बोला– "धीरज! मैं जानता हूं कि तुम चोरी जैसे घृणित कार्य नहीं कर सकते। तुमने एक परिवार को बीच मंझधार में डूबने से बचा लिया। तुम महान हो। इसमें तम्हारा कोई कसूर नहीं है। तुम जेल से छूटकर सीधे मेरे घर आना। मेरे घर का द्वार सदैव तुम्हारे लिए खुला रहेगा। मैं कहीं न कहीं तुम्हारी रोजी–रोटी की व्यवस्था करवा दूंगा। तुम निर्दोष हो। तुम्हारे जैसे लोग ही इतना महान कार्य कर सकते हैं। तुम इन बातों को लेकर ज्यादा सोच–विचार मत करना।" इतना कहकर मैं अपनी आंखें नीचे किये तेज कदमों से जेल से बाहर निकल गया। •

पता : विनीता भवन, निकट–बैंक ऑफ इंडिया, काजीचक,
सवेरा सिनेमा चौक, बाढ़–803213 (बिहार)
मो. : 09135014901

वह अद्‌भुत प्रेम

❑ रेनू सैनी

तूलिका तेजी से मेट्रो की ओर दौड़ी। आज मेट्रो में काफ़ी भीड़ थी। उफ् यह उमस भरी गर्मी एसी में भी चैन नहीं लेने देती। ऊपर से मेट्रो में इतनी भीड़.........। तूलिका जल्दी से बंद होती मेट्रो में जा घुसी। सामने लेडीज़ सीट पर एक सज्जन को बैठे देखकर उसकी निगाहें टकराईं लेकिन उसने जल्दी से वहां से नज़रें दूसरी ओर फेर लीं। लेडीज़ सीट पर बैठा सज्जन उठा और बोला, ''आप बैठ जाइए।'' इस पर तूलिका उसे अजीब नज़रों से देखते हुए बोली, ''नहीं कोई बात नहीं, आए एम ओके.'' ''मैडम प्लीज, काइन्डली हैव ए सीट।'' अन्य यात्रियों को अपनी ओर ताकते देख तूलिका ने एक पल की भी देर नहीं की और उस सीट पर बैठ गई। वह शख़्स कुछ देर बाद आगे की ओर बढ़ गया था, शायद उसका स्टेशन आ गया था। तूलिका आंखें बंद कर उसके बारे में ही सोचती रही। उसे कुछ समझ ही नहीं आ रहा था कि कि अभी–अभी क्या घटित हुआ था?

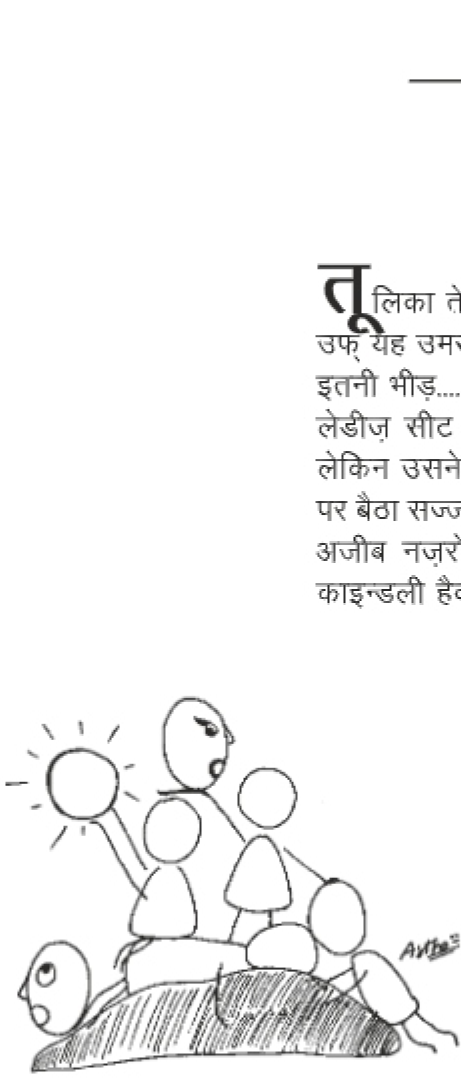

वह व्यक्ति पुरुष था या महिला या.........या कोई और.........। हां वह किन्नर ही था। लेकिन शिक्षित एवं भले घर का लग रहा था। वह सोच में डूबी ही थी कि तभी आवाज़ आई केन्द्रीय सचिवालय। उसकी तंद्रा भंग हुई, तुरंत वह अपना बैग संभालकर मेट्रो से बाहर निकली।

तूलिका रेडियो स्टेशन में कार्यक्रम अधिकारी थी। आकर्षक व्यक्तित्व की स्वामिनी होने के साथ–साथ वह आकर्षक आवाज़ की भी मालकिन थी।

घर में वह सबसे छोटी थी। बड़ा भाई डॉक्टर था। माता–पिता दोनों ही सरकारी नौकरी में थे। एक नज़र देखने पर तूलिका सभी को पसंद आ जाती थी। उसका वाचाल स्वभाव, मासूम भाव–भंगिमाएं इतने आकर्षक होते थे कि कई लोग तो अपना दिल ही हार बैठते थे।

उस दिन तूलिका अपने कार्य में लगी हुई थी। कार्यालय में कार्य ज्यादा था। सावन का महीना होने के कारण सावन पर कुछ विशेष कार्यक्रमों के प्रसारण की योजना चल रही थी। तूलिका को कुछ कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार करके उपनिदेशक को दिखानी थी ताकि कार्यक्रम को फाइनल किया जा सके। कार्यक्रम की रूपरेखा बनाते–बनाते घड़ी की सुई आगे खिसकती रही। सात बज गए तो तूलिका का ध्यान घड़ी की ओर गया। वह फटाफट उपनिदेशक के पास अपनी तैयार रिपोर्ट लेकर गई। उपनिदेशक ने उस पर सरसरी निगाह

डाली और कल फाइनल करने के लिए कहा। वह वापिस अपने कमरे में आई। सब कुछ समेटते–समेटते उसे साढ़े सात बज गए। तुरंत वह मेट्रो की ओर दौड़ी। लेडीज कोच में सीट मिल गई। तब उसने राहत की सांस ली। छतरपुर आने पर वह उतरी। रात ज्यादा हो गई थी। कुछ दूर चलते ही उसने महसूस किया कि दो तीन निगाहें उसे घूर रही हैं। उसका घर मेट्रो स्टेशन से दस मिनट के अंतराल पर था। यह दस मिनट का फासला उसे पैदल ही पार करना पड़ता था। वहां पर रिक्शे व बस की व्यवस्था कम ही थी। उसने तेज़ी से अपने कदम बढ़ाए। उन आवारा लोगों की फब्तियां बढ़ती जा रहीं थी। उस समय लोगों की चहल–पहल उस ओर कम थी, इसलिए तूलिका उनसे कोई पंगा लेने से बच रही थी। अभी भी उसने बिना देखे चलना जारी रखा तो एक युवक उसके नज़दीक आया और उसका हाथ पकड़ने लगा। यह देखकर तूलिका स्वयं पर काबू न रख पाई और उसने खींचकर उसे एक तमाचा जड़ दिया। मार्ग सुनसान सा था। तीन–चार युवकों को एक लड़की को घेरते देख अनेक लोग तो चुपचाप यह सब देख अनदेखा कर चलते बने। सब किसी संकट में फंसने से बचना चाहते थे।

तूलिका समझ गई कि कोई उसकी मदद को आगे नहीं आएगा। उसने स्वयं पर हौंसला रखा और अपना मोबाइल फोन मिलाने लगी। दूसरे युवक ने मोबाइल छीन लिया। उनकी क्रूर अट्टहास की ध्वनियां पूरे वातावरण में गूंज रही थीं। तभी एक व्यक्ति तेजी से वहां आया और बोला, ''यह क्या बदतमीजी है। एक लड़की को सरेआम छेड़ते शर्म आनी चाहिए।'' जैसे ही तूलिका ने आवाज की दिशा में देखा तो फिर से उसी मेट्रो वाले व्यक्ति को देखकर दंग रह गई। वह कुछ बोल पाती कि तभी तीनों युवक उसका मज़ाक उड़ाते हुए बोले, ''अरे, तू इसको बचाएगा? एक किन्नर इसे बचाएगा।'' हा...हा करते हुए तीनों युवक उस शख्स पर गंदी फब्तियां कसने लगें। यह देखकर उसकी मुट्ठियां भिंच गईं और उसने एक ही वार में एक युवक के जबड़े पर करारा वार किया। एक ही वार में उसके दो दांत टूटकर नीचे गिर गए। अन्य दोनों भी उसके भयंकर वार से दंग रह गए। तीनों की घिग्घी बंध गई। युवक ने दूसरे गुंडे से तूलिका का मोबाइल लिया और उसकी ओर बढ़ा। अपनी ओर बढ़ते देख तीनों वहां से जान बचाकर भागे। रह गए तूलिका और वह। तूलिका तो इस दृश्य को देखकर जड़वत हो गई थी। थोड़ा होश संभालने पर उसने अपना मोबाइल लिया और बोली, ''थैंक्स। थैंक्यू सो मच। 'इट्स ओके मैडम। लेकिन आपको आजकल के माहौल को देखते हुए देर रात तक बाहर नहीं रहना चाहिए। आजकल दिल्ली में लड़कियों के साथ ऐसे हादसों की संख्या बढ़ती जा रही है।'' उसे बोलते देख तूलिका बोली, ''जी........मैं समय पर ऑफिस से निकलती हूं, लेकिन आज काम करते हुए वक्त का पता ही नहीं चला। कुछ ज़रूरी काम था, इसलिए निबटाना पड़ा।'' ''चलिए आगे से ध्यान रखिएगा।'' यह कहकर वह वहां से जाने लगा तो तूलिका पीछे से आवाज देते हुए बोली, ''रुकिए, मुझे डर लग रहा है। अगर हो सके तो आप थोड़ा आगे तक छोड़ दीजिए।''

तूलिका और वह साथ–साथ चलने लगे। एक मूक...... ...निश्वास आवाज़...। गहराती रात, कुछ वाहनों की घूं–घूं, स्ट्रीट लाइटों की रोशनी और निःशब्द साथ चलते हुए उन दोनों की आकृतियां। एक चुप्पी..........शोर मचाती उथल–पुथल करती दोनों की भावनाएं चाह कर भी एक दूसरे से अबोली थीं। शख़्स ने मौन भंग किया और बोला, ''मैडम, मेरा नाम गौरव है । आपका नाम क्या है?

''तू...तूलिका।''

अंधकार में दोनों के चेहरों पर असमंजस व अनिश्चितता के साथ एक अद्‌भुत अनुभूति के भाव भी स्पष्ट झलक रहे थे।

जब तूलिका का घर पास आ गया तो वह बोली, ''गौरव, आप मुझे अपना मोबाइल नंबर दे सकते हैं?'' गौरव ने अपना नम्बर तूलिका को दे दिया।

जैसे ही तूलिका घर में घुसी उसने माता–पिता व भाई तीनों को उसी का इंतज़ार करते हुए पाया। प्रिया बोली, ''बेटा, इतनी देर कैसे हो गई? तुम फोन भी नहीं उठा रही थी?'' क्या हुआ? सब ठीक है न।'' वह बोली, ''अरे मां, इतनी रात कहां हुई है? हां फोन उठा नहीं पाई।'' फिर वह सीधा अपने कमरे में चली गई। प्रिया तूलिका के हाव–भाव से समझ गई थी कि कुछ तो हुआ है। वह भी तूलिका के पीछे–पीछे कमरे में चली गई और बोली, ''क्या बात है आज परेशान हो?'' इस पर तूलिका प्रिया के गले में हाथ डालते हुए बोली, ''मम्मा, कुछ खास नहीं। आज मेट्रो से आते समय कुछ आवारा से लड़के बदतमीजी कर रहे थे। बस........ इसलिए थोड़ी अपसेट हूं।'' तूलिका की बात सुनकर प्रिया परेशान होकर बोली, ''बेटा, इतनी रात में तुमने पापा या भैया किसी को भी फोन नहीं किया..........अगर कुछ हो जाता तो.... ....।'' ''बस मां, अब छोड़ो इस बात को। मैं ठीक हूं। वैसे एक इज़्जतदार व्यक्ति ने मेरी मदद की थी। वही मुझे यहां तक

छोड़ कर गया है।'' ''बेटा, उसे घर क्यों नहीं लाई?'' मां के इस शब्द पर तूलिका चौंकी फिर बोली, ''मम्मा, कभी जरूर लाऊंगी। चलो अब खाना खाएं।'

इसके बाद सभी खाना खाने बैठ गए। तूलिका के बारे में थोड़ी सी चर्चा चली लेकिन आज आरव के अस्पताल में हुए हंगामे पर चलती बहस के कारण वह दब गई। आरव एक प्रतिष्ठित निजी अस्पताल में सर्जन था। आज अस्पताल में एक महिला किन्नर को भर्ती किया गया था। महिला किन्नर दर्द से बुरी तरह चिल्ला रही थी। उसकी आंतों में जबरदस्त घाव थे, रक्त बह रहा था। उसे ओ नेगेटिव रक्त की जरूरत थी लेकिन उस समय ओ निगेटिव रक्त समूह को एकत्र करने में कुछ वक्त लग गया जिससे किन्नर की मौत हो गई। किन्नर समुदाय ने वहां पर भीड़ इकट्ठी कर हंगामा खड़ा कर दिया था। इसी विषय पर आरव सब से चर्चा कर रहा था। वह अचानक चीख कर बोला, ''ऐसे लोगों को तो ज़िंदा रहने का ही कोई हक नहीं है। किसी काम के होते नहीं है। बस आम व्यक्ति की ज़िंदगी खराब करने चले आते हैं।'' आरव के इस वाक्य पर तूलिका भड़ककर कर बोली, ''भैया, आप एक डॉक्टर होकर ऐसी बात सोच भी कैसे सकते हैं? डॉक्टर भगवान का दूसरा रूप होता है। उसका उद्देश्य सिर्फ लोगों की जान बचाना है, उनके व्यक्तित्व या लिंग पर कमेंट करना नहीं। भला क्यों ऐसे लोग किसी काम के नहीं हैं? क्यों उन्हें ज़िंदा रहने का हक़ नहीं है? उनका क्या दोष है? किसी को केवल लिंग से आंकना कहां तक उचित है?'' तूलिका व आरव की बहस बढ़ते देख प्रणव बोले, ''तुम दोनों शांत हो जाओ। ऐसे विवादों का कोई अंत नहीं है। खाना खाओ और अपना काम करो।''

तूलिका खाना खाकर अपने कमरे में आ गई। वह लेटकर तकिए से खेलने लगी और कभी गौरव तो कभी आरव की बातों को सोचने लगी। वह स्वयं से बोली, ''अच्छा ही हुआ, जो मैंने गौरव के बारे में खुलकर नहीं बताया। वरना भैया और पिताजी का पता नहीं क्या रूप देखने को मिलता?'' वह गौरव के बारे में सोचते–सोचते ही सो गई।

अगले दिन तूलिका ऑफिस जाने के लिए निकली। मेट्रो में घुसते ही उसकी नज़रें किसी को तलाश रहीं थीं। उसे स्वयं नहीं समझ आ रहा था कि ये क्या हो रहा है? लेकिन उस दिन उसे निराशा ही हाथ लगी।

ऑफ़िस में पहुंचकर उसने आरव के अस्पताल में घटित हुए मामले पर लोगों को चर्चा करते हुए पाया। वह मूक उनकी बातें सुनती रही। तूलिका के कमरे में वरिष्ठ कार्यक्रम अधिकारी पी.सी. मेहता भी बैठते थे। उनका व्यक्तित्व तूलिका को एक चुगलखोर टाइप का लगता था। आंखों पर मोटा चश्मा, जो हमेशा आंखों से नीचे रहकर लड़कियों को ताकने में लगा रहता था। काले–सफेद खिचड़ी जैसे बाल। मुख पर कृत्रिमता का आवरण ओढ़े हंसी जो तूलिका को हर वक्त खिजाती रहती थी। जब भी उपनिदेशक व निदेशक महोदय किसी कार्यक्रम के लिए बुलाते तो वह तूलिका को अपना मातहत समझते हुए वहां जाने का आदेश देता और मन ही मन खुश होता कि गाज गिरेगी तो तूलिका के सिर पर। वह तो साफ़ बच जाएगा। लेकिन तूलिका बेहद चतुर थी। वह काम इतनी समझदारी व होशियारी से करती थी कि निदेशक व उपनिदेशक उसके काम से अधिकतर प्रभावित ही होते थे। आज तूलिका की नज़रें बार–बार अपने बगल में बैठे पी.सी. मेहता की तरफ जा रही थीं। न जाने क्यों मन बार–बार गौरव की उससे तुलना करने लगा था। वह सोचने लगी यह व्यक्ति स्वयं को पूर्ण पुरुष मानता है लेकिन अपनी कमियों को छिपाने के लिए महिलाओं का सहारा ढूंढता है। कोई भी रिस्की काम यह व्यक्ति अपने कंधों पर नहीं ले सकता। दूसरी ओर गौरव समाज की नज़रों में अशक्त व निरर्थक होकर भी सार्थक है।

सोच से बाहर आई तो पी.सी. मेहता को बोलते पाया, ''तूलिका जी, क्या आज घर से लड़कर आई हैं। कितनी देर से आवाजें लगा रहा हूं, लेकिन अपने ही ख्यालों में खोई हुई हो।'' ज़ोरदार शब्दों में पी.सी. मेहता को बोलते देख तूलिका थोड़ा हड़बड़ाई और बोली, ''जी...सर, बस ऐसे ही किसी कार्यक्रम की रूपरेखा बना रही थी।'' ''अरे भई, तुम कितनी ही रूपरेखाएं बनाओ लेकिन यह भी तो ध्यान रखो कि तुम एक वरिष्ठ अधिकारी के कक्ष में बैठती हो। अब जरा इधर ध्यान से सुनो। राजनीति में उतरने को तैयार किन्नर अचला से बातचीत की विषयवस्तु तैयार करो। उनका एक साक्षात्कार लेना है।'' पी.सी. मेहता के ऐसा बोलने पर वह आश्चर्य से बोली, ''सर, विषयवस्तु बनाकर आपको दिखाती हूं।''

न जाने क्यों बार–बार उसे गौरव की याद आ रही थी। कई बार फोन पर हाथ जाते कि उससे बात करे लेकिन फिर वह स्वयं ही सोचती कि उसका ऐसे बात करना क्या ठीक होगा?

कल ही तो मिले हैं। और आज मैं फोन भी कर दूं तो वह मेरे बारे में क्या सोचेगा? लेकिन विषयवस्तु के बारे में बताकर उससे मदद की आशा करके बात अवश्य की जा

सकती है। तभी किसी के मोबाइल पर ''ये मुलाक़ात एक बहाना है'' गाने की आवाज़ सुनाई दी। वह हैरानी से इधर–उधर होकर देखने लगी और बोली, ''क्या वास्तव में जब हमारे मन में कुछ अलग घटित हो रहा होता है तो वातावरण व कार्य को भी उसकी भनक लग जाती है। आज सुबह से जितना मैं गौरव को भूलकर काम में डूबने की कोशिश कर रही हूं, उतनी ही बार वह बार–बार मेरे मन में समाता जाता है ।''

इसी कशमकश में चार बज गए। लेकिन उसने गौरव को फोन करना उचित नहीं समझा। हां, आजकल मेट्रो में घुसते ही उसकी नज़रें वहां हर वक्त किसी को ढूंढती रहती थीं। लगभग दो महीने बीत गए लेकिन गौरव उसे फिर नजर नहीं आया।

अगले दिन उसने सोच लिया कि वह गौरव को फोन अवश्य करेगी। जैसे ही वह मेट्रो में घुसी तो उसने गौरव को खड़े पाया। वह आश्चर्य से कभी गौरव को देखती तो कभी यह सोचती कि इत्तफाक वाक़ई जीवन का एक अभिन्न हिस्सा हैं। उसने गौरव को धीरे से ''हैलो'' कहा। कुछ ही देर बाद सामान्य कोच की दो सीटों वाला हिस्सा खाली हो गया और दोनों वहां बैठ गए। आज तूलिका न ही असमंजस की स्थिति में थी, न ही उसे लोगों को देखकर शर्म व संकोच हो रहा था। वह बोली, ''गौरव जी आप इतने दिनों तक कहां थे?'' ''क्यों क्या आप मुझे मिस कर रही थीं?'' गौरव की स्पष्टता पर वह मुग्ध हो गई और बोली, ''हां आपको कैसे पता?'' ''क्योंकि मैं भी आपको मिस कर रहा था। कुछ अलग था तुममें, जो मुझे बार–बार तुम्हारी ओर खींच रहा था। अभी तक किसी भी लड़की को ऐसा नहीं पाया था जो मुझे सामान्य समझती। लगता था सभी घृणा की नज़रों से देखती हैं। शायद तुम भी देखती अगर मुझमें आत्मविश्वास की कमी होती और जीने का हौंसला न होता।'' इतना स्पष्ट कैसे बोल देता है गौरव? तभी मेट्रो में केन्द्रीय सचिवालय की आवाज सुनाई दी। तूलिका खड़ी होते हुए बोली, ''गौरव कल शाम को कहीं बाहर कॉफी पीते हैं न। अगर आपको बुरा न लगे तो।'' गौरव बोला, ''इसमें बुरा लगने वाली कौन सी बात है? अच्छे दोस्त पाने के लिए तो सब कुछ कुर्बान किया जा सकता है।'' कल का समय निर्धारित करने के बाद तूलिका गौरव को बॉय कहकर अपने ऑफिस की ओर चल पड़ी।

अगले दिन दोनों कनॉट प्लेस के एक रेस्टोरेंट में बैठे हुए थे।

तूलिका बोली, ''गौरव मैं तुम्हारे बारे में सब कुछ जानना चाहती हूं। प्लीज मुझे अपने परिवेश व स्थितियों से अवगत कराइए।''

गौरव बोला, ''क्यों मेरे बारे में सब जानकर क्या करोगी? क्या मुझ पर पुस्तक लिखने का इरादा है?''

''उफ़ऽऽओ। आप भी न। प्लीज बताइए न।''

गौरव मुस्कराते हुए बोला, ''तूलिका मेरा जन्म एक खाते–पीते संपन्न परिवार में हुआ था। जन्म लेने के कुछ समय बाद ही मेरे माता–पिता समझ गए थे कि मैं न ही पुरुष हूं, न ही महिला। लेकिन मेरे माता–पिता को मैं उसी रूप में स्वीकार था। उन्होंने मेरे लिए शिक्षा व्यवस्था से लेकर हर जगह पर आवाज उठाई कि मैं क्यों सामान्य व्यक्तियों की तरह शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकता, क्यों मैं सामान्य व्यक्तियों के साथ खेल नहीं सकता आदि। माता–पिता के सहयोग ने मेरे अंदर आत्मविश्वास भरा। समर पब्लिक स्कूल के प्रिंसिपल मेरे पिता के बहुत अच्छे दोस्त थे। उन्होंने सभी विद्यार्थियों के माता–पिता की नाराजगी झेलने के बावजूद मुझे स्कूल में भर्ती किया। उन्हें इसके लिए काफी असुविधा उठानी पड़ी लेकिन वह अपने इरादे पर अटल रहे और मेरी शिक्षा उस स्कूल के द्वारा निर्विरोध चलती रही। मैं स्वयं को इसी रूप में स्वीकार कर चुका था। इसलिए दोगुने आत्मविश्वास से न सिर्फ पढ़ाई में जुट गया अपितु मैंने जूडो, ताइक्वांडो आदि का प्रशिक्षण भी लिया। स्कूलों द्वारा विविध प्रतियोगिताओं में भी मैंने भाग लिया और विजयी भी रहा।

मैंने एम.एस.सी एग्रीकल्चर से की है। मैं कृषि की फील्ड में कुछ नया करना चाहता हूं। मैं फिलहाल एक ऐसा उपकरण बनाने का प्रयास कर रहा हूं जिसे वर्षा न होने पर या अकाल की स्थिति में प्रयोग में किया जा सके। उसमें जल को सुरक्षित रख कर आड़े वक्त में उसकी सहायता से फसल उगाई जा सके। जल को रिफाइन करने के लिए व उसे लंबे समय तक स्वच्छ रखने के लिए मैं खोजों में लगा हुआ हूं। थोड़ी बहुत सफलता मुझे हाथ लग गई है। काम जारी है। आगे देखते हैं क्या होता है? मैं एक स्टार्टअप की तैयारी भी कर रहा हूं। वह भी कृषि से ही जुड़ा होगा। अगर सब कुछ सही रहा तो इससे अनेक लोगों को रोजगार भी प्राप्त होगा।'' यह कहकर वह मुस्कराने लगा।

तूलिका उससे जितना ही बात करती वह उसे उतना ही ज्यादा समझदार, होशियार व आकर्षक पाती। अभी तक हुई दो मुलाकातों के दौरान तीसरी मुलाकात ने उसे और भी अधिक प्रभावित किया। भला कितने सामान्य युवक इतनी

समझदारी से देश को आगे बढ़ाने के लिए सोचते हैं?

रेस्टोरेंट में कॉफी के साथ हल्के–फुल्के स्नैक्स लेने के बाद गौरव बोला, ''भई आज तो तुमने मेरा पूरा इंटरव्यू ही ले लिया। पर बहुत अच्छा लगा तुमसे बात कर के। मिलते रहेंगे इसी तरह।'' इसके बाद दोनों वहां से बाहर निकले। अचानक कुछ ही देर में काले बादल छा गए और झमाझम बूंदे धरती और तूलिका दोनों को भिगोने लगीं। तन–मन को भिगोती ठंडी बूंदे उस दिन तूलिका को बिल्कुल नई–नई लग रही थीं। उसे लगा कि बरखा उसकी दोस्ती पर मोहर लगाने के लिए ही बरसी है।

अब तूलिका इस बात को स्वीकार कर चुकी थी कि वह गौरव को पसंद करने लगी है। शाम को ऑफिस से लौटने पर तूलिका जल्दी ही अपने कमरे में चली गई। उसने मोबाइल खोला और गौरव से चैटिंग करनी आरंभ कर दी।

अब तो यह प्रतिदिन का नियम बन गया। मोबाइल पर चैटिंग के दौर शुरू ही नहीं हुए, बल्कि तेजी से दौड़ने लगे। मिलना भी अक्सर होता रहता था।

इन दिनों तूलिका में आए परिवर्तन व उसके पहले से अधिक बनने संवरने पर प्रिया का ध्यान था। एक दिन प्रिया तूलिका के पास बैठी हुई थी। अचानक प्रिया बोली, ''तूली, आरव की मंगनी तो डॉ. निकिता से हो गई है। मैं चाहती हूं कि तू भी अब सैटल होने के बारे में कुछ सोचे। न जाने मुझे क्यों ऐसा लग रहा है कि तूने भी अपना जीवनसाथी ढूंढ लिया है। एक मां की नज़रें कभी धोखा नहीं खा सकतीं।'' मां की नजरों को पहचान कर हैरान होने की बारी तूलिका की थी। वह समझ ही न पाई कि क्या कहे। बस बोली, ''क्या मां........., अभी ऐसी भी क्या जल्दी है? मैं फिलहाल शादी करने के मूड में नहीं हूं।'' ''अच्छा, इसका मतलब अभी तू कुछ समय उसके साथ बिताकर उसे समझना चाहती है।'' मां को स्पष्ट बोलते देख तूलिका बोली, ''मां...............आप भी न, आपको कैसे ऐसा लग रहा है। ऐसा कुछ नहीं है।'' प्रिया बोली, ''तूली, इन दिनों तुम्हारे चेहरे पर प्रेम की रौनक स्पष्ट पढ़ी जा सकती है। लड़का शिक्षित, अच्छा व चरित्र वाला होना चाहिए। वैसे मुझे तुझ पर पूरा भरोसा है। तू बहुत समझदार है। जो भी फैसला लेगी अच्छी तरह सोच–समझ कर ही लेगी। अगर तू कुछ समय उसे समझने में लेना चाहती है तो अच्छी बात है। आगे तेरी मरजी।'' ऐसा कहकर प्रिया कमरे से बाहर तो आ गई लेकिन तूलिका को एक गहन झंझावात में डुबो गई। लड़का............लड़का शिक्षित, अच्छा व चरित्र वाला होना चाहिए। ये शब्द उसके कानों में पिघला शीशा घोल रहे थे। अगर लड़का न हो तो...........तो फिर विवाह का क्या अर्थ? विवाह एक पुरुष व स्त्री में ही संभव है? तभी तो सृष्टि आगे बढ़ती है। अगर एक पुरुष व स्त्री अपने जैसे लिंग के साथ ही विवाह कर लें या तीसरे लिंग के साथ...........तो समाज को क्या परेशानी है? सिर्फ़ सृष्टि ही तो आगे नहीं बढ़ेगी लेकिन इससे दहेज, व भ्रूण हत्याओं पर लगाम अवश्य लग जाएगी। क्या ऐसा संभव है? आज तक तो नहीं हुआ। यदि हुआ भी है तो ऐसे समाचार व खबरें अवश्य चर्चा का विषय बने हैं। टी.वी. वाले चैनलों ने भी टी.आर.पी. बढ़ाने के चक्कर में ऐसे प्रकरणों को उठाने में दिलचस्पी दिखाई है। वह कैसे मां से कहे कि वह एक ऐसे इंसान से प्रेम करती है जो पुरुष न होकर भी पुरुषत्व की गरिमा से बहुत ऊपर है, जिसका कद एक सामान्य पुरुष से कहीं ऊंचा है, जिसका हृदय आम पुरुष से बहुत खास व विशाल है। हां उसे प्रेम हो गया है.........एक अद्भुत प्रेम। प्रेम की परिसीमा उम्र, दायरों, मज़हबों यहां तक कि लिंग में रहकर कब बंधी है। वह तो बस हो जाता है। कैसे होता है? कब कहां? कुछ पता नहीं। मिर्ज़ा ग़ालिब ने यों ही थोड़े कहा था कि, 'इश्क वो आतिश है गालिब जो लगाए न लगे और बुझाए न बुझे।' अब वह क्या करे? कैसे इन प्रेम की परिसीमाओं से स्वयं को मुक्त करे? कैसे गौरव की चाहत को उखाड़ फेंके। वह तो निर्दोष है। किंतु समाज उसे जीवित नहीं छोड़ेगा। पूरे विश्व में खलबली मच जाएगी । आज तक कभी किसी ने सुना है कि किसी सामान्य युवती ने किसी पुरुष किन्नर से विवाह कर एक सामान्य जीवन जिया है। न सुना हो, न देखा हो, उसे क्या? समाज में लीक पर चलने वाले अनेकों लोग हैं। उसने जानबूझकर गौरव से प्रेम नहीं किया। उसने उसे शारीरिक रूप से चाहा ही कब था? वह तो मुग्ध थी उसके आत्मविश्वास पर, उसके सद्गुणों पर। कैसे यह आकर्षण प्रेम के स्वरूप में बदल गया। पता ही न चला।

उसने तुरंत गौरव को फोन मिलाया। कुछ देर घंटी बजती रही। गौरव ने फोन उठाया, तूलिका के हैलो बोलते ही गौरव बोला, ''क्या हुआ तूली? कुछ परेशान हो। क्या बात है?'' न जाने कैसे उसकी आवाज व भाव–भंगिमाएं गौरव को उसकी वास्तविकता बयान कर देती हैं। धीरे–धीरे दोस्ती ने तूलिका को तूली बना दिया था। उसे भी गौरव के द्वारा तूली कहलाना बेहद पसंद था। तूलिका बोली, ''कुछ परेशान हूं। तुमसे मिलना चाहती हूं। कल ऑफिस नहीं जा रही। क्या कल सुबह ग्यारह बजे मिल सकते हो?'' ''ओ.के. कल मिलते

हैं। बट् नाव रिलैक्स। एवरीथिंग विल बी ऑल राइट। बायॅ एंड गुडनाइट।'' तूलिका को वह रात सबसे भारी रात लगी। उसकी आंखों में नींद का नामोनिशान नहीं था। बस सुबह की प्रतीक्षा थी।

सुबह वह जल्दी ही तैयार हुई और गौरव से मिलने के लिए चल दी। वह उससे एकांत में मिलना चाहती थी। जहां उससे खुलकर हर विषय पर बात कर सके। उसने सदाबहार गार्डन मिलने के लिए चुना। वहां पर एकांत मिल जाता था। वर्किंग दिनों में वहां बहुत कम भीड़ होती थी। गौरव गाड़ी लेकर आया हुआ था। तूलिका बेसब्री से उसका इंतज़ार कर रही थी। आते ही वह उसके गले लग गई और बोली, ''गौरव आई लव यू.........मैं तुमसे बहुत प्रेम करती हूं। सिर्फ़ तुमसे और तुम्हारी जगह कोई नहीं ले सकता। इसके बाद उसने गौरव पर चुंबनों की बौछार कर दी लेकिन गौरव शिथिल था। उस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।'' गौरव तूलिका का व्यवहार देखकर दंग था। उसने स्वयं को तूलिका से अलग किया और उसके कंधे थपथपाते हुए बोला, ''तूलिका जस्ट रिलैक्स। मैं यहीं हूं। कहीं नहीं जा रहा। पहले खुद को नियंत्रित करो। उसके बाद मुझसे बात करो।'' तूलिका ने पानी पिया। कुछ देर चुप रही। उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। कैसे कहे कि उसके मन में क्या चल रहा है? अजीब कशमकश में थी वह। उसने मां से हुआ कल का वार्तालाप बताया। बमुश्किल वह शब्दों को बोल पा रही थी। उसके हर शब्द में पीड़ा व रुदन शामिल था जो यह ज़ाहिर कर रहा था कि उसे गौरव से शिद्दत से प्रेम है। इस प्रेम में चाहे कितनी ही अग्नि भड़के किंतु वह शांत नहीं होगी। चाहे प्रेम की अग्नि उसे जला दे किंतु वह इस अग्नि से अब बाहर नहीं निकल सकती। सारी बात जानने के बाद गौरव स्तब्ध था। वह बोला, ''मैं भी तो तुम्हें हृदय से बहुत चाहता हूं। लेकिन यह भी सच है कि हमारा रिश्ता अद्‌भुत है। हम दोनों के परिवार वाले शिक्षित व बौद्धिक हैं। अगर मैं सामान्य लड़का होता तो तुम्हारे साथ–साथ तुम्हारे परिवारवालों को भी बहुत खुशी होती। किंतु वर्तमान में यह सच नहीं है। यह भी एक अनिवार्य सत्य है कि शारीरिक मापदंड भी एक सामान्य व्यक्ति के लिए अनिवार्य हैं। मैं उसमें अशक्त हूं। हो सकता है यह तुम्हारा इनफैक्चुएशन हो जो वक्त के साथ दूर हो जाए। तुम भी मेरे जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुकी हो और शायद इस जन्म में मैं तुम्हें अपने से दूर करने की बात सोच भी नहीं सकता।'' ''गौरव, तुम ऐसा सोच भी कैसे सकते हो? क्या तुम्हें यह इनफैक्चुएशन लगता है। क्या मैं कोई बच्चा हूं? सत्ताईस वर्ष की आयु है मेरी। लगभग दो वर्ष से एक–दूसरे को भली–भांति समझते हैं। इन दो वर्षों के हर दिन के हर सेकण्ड में हम दोनों ने ही एक–दूसरे से बहुत सी बातें शेयर की हैं। अब हम दोनों एक दूसरे की जरूरत बन चुके हैं। एक बात बताओ इस दुनिया में कितनी ऐसी लड़कियां हैं जिनका विवाह अभी भी लड़के से परिचित हुए बिना कर दिया जाता है। उनमें से अनेक लड़कियां मूक बनकर रिश्ते को ढोती रहती हैं। उनमें से कइयों पर बांझ का तमगा लग जाता है। जबकि वास्तविकता यह होती है कि लड़का शारीरिक रूप से अशक्त होता है। बोलो क्या वह लड़कियां संस्कारवश एक ही व्यक्ति के साथ जीवन नहीं बिताती। वे अपनी शारीरिक इच्छाओं को एक कोने में दबा कर उसके परिवार के लिए स्वयं को कुर्बान कर देती हैं। वे उस पुरुष की नाममात्र की पत्नी होती हैं। क्योंकि पत्नी को पूर्णता पति के संसर्ग में ही मिलती है। उसी तरह बाल विधवाएं जीवन भर बिना किसी शारीरिक संबंधों की इच्छा के अपना जीवन गुजार देती हैं। हो सकता है उनमें से अनेक महिलाएं छटपटाती हों इस नैसर्गिक आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए। लेकिन फिर भी ऐसी महिलाएं भी तो हैं न जो इस आवश्यकता को पूर्ण किए बिना ही जीवनयापन श्रेष्ठ तरीके से करती हैं। प्रेम हो जाए तो उसके आगे शारीरिक आवश्यकता गौण बन जाती है क्योंकि ऐसे संबंधों की लालसा प्रेम व निजता से उत्पन्न होती है और जहां यह सब नहीं वहां ऐसे संबंध बलात्कार से अधिक कुछ नहीं होते और जब प्रेम व निजता से ऐसे संबंध उपजते हैं तो उसके आगे शारीरिक आवश्यकता नगण्य हो जाती है। आप समझ रहे हैं न मैं जो कुछ कह रही हूं।''

गौरव तूलिका को बेधड़क बोलते देख दंग रह गया। वह बोला, ''तूलिका, जो कुछ तुमने कहा। वह सच है लेकिन उससे तुम प्रकृति से नहीं लड़ सकती। अभी तक गे व लेस्बियन की लड़ाई चल रही है। अनेक देशों में ऐसे व्यक्तियों को जोड़ों के रूप में रहने की आज़ादी मिल चुकी है। लेकिन फिर भी इसे प्रकृति के विरूद्ध ही माना जाता है। हम अच्छे दोस्त हैं, अच्छे प्रेमी भी हैं फिर भी उस पर विवाह की मुहर लगाने की आवश्यकता तुम समझती हो।'' ''गौरव, तुम समझ नहीं रहे हो। हम भारतीय समाज में रहते हैं। यहां पर एक लड़की का विवाह अनिवार्य समझा जाता है ताकि एक पुरुष उसकी रक्षा कर सके। उसे सभी बुनियादी सुविधाएं दे सके। वह सब तुम दे सकते हो और अन्य लड़कों से बेहतर दे सकते हो तब भी पीछे क्यों हट रहे हो?''

''इसलिए कि मैं सच में तुम्हारे भविष्य व सुरक्षा को लेकर चिंतित हूं और जो मांग तुम कर रही हो उससे तुम्हारे भविष्य व सुरक्षा पर प्रश्न चिहन लग सकता है। तुम्हारे घर वाले कभी मुझे स्वीकार नहीं करेंगे। समाज से सुरक्षा मांगोगी, समाज खुद ऐसे संबंधों का पक्षधर नहीं है। बोलो, इस समाज व देश से बचकर कहां जाओगी?'' ''लेकिन गौरव मेरे माता–पिता को एक न एक दिन तो इस बात का पता चलेगा ही। फिर क्या..........? बोलो......मेरी मां मेरे विवाह के प्रति आशंकित है। उन्हें लगता है कि मैं इन दिनों किसी लड़के के साथ डेटिंग कर रही हूं। मैं कैसे उन्हें तुम से परिचित कराऊं। तुमने मेरी हर विकट परिस्थिति में सहायता की है। मेरी विकट परिस्थितियों में मुझे क्यों किसी पूर्ण पुरुष ने सहारा नहीं दिया। उस दिन मेट्रो स्टेशन पर जब तुमने मुझे बचाया, तब तो तुम्हें मुझसे कोई लगाव नहीं था। सिर्फ इंसानियत के कारण ही तो तुमने ये किया। उस समय तुमने अपनी जान की परवाह भी नहीं की थी। तब कहां थे ये पुरुष? उन पुरुषों ने अपने बल का प्रयोग करके मुझे बरबाद करना चाहा था। तुम्हें क्या लगता है कि वे प्राकृतिक तौर पर पुरुष हैं इसलिए उन्हें योग्य समझा जाए। गौरव मुझे और कुछ नहीं कहना है। मैं सिर्फ़ तुमसे प्रेम करती हूं। तुम्हारे साथ जीवन बिताना चाहती हूं। तुम और मैं हर तरह से एक–दूसरे के योग्य हैं। मेरा आत्मविश्वास बढ़ाओ गौरव। इसलिए मैं तुम से मिलने आई हूं। मैं आज अपने घर में इस बात को सबको बताना चाहती हूं।'' ''बड़ी विकट स्थिति है तूली। अजीब से संबंध सामान्य होते हुए भी सामान्य नहीं कहलाए जा सकते। तुम्हारे और मेरे अंदर प्रेम और भावनाओं की समान लहरें आलोड़ित हो रही हैं। लेकिन यह सिर्फ तुम और मैं समझ सकते हैं। मैं तुम्हें पत्नी बनाकर वह गौरव व गरिमा नहीं दे सकता जो एक पुरुष की पत्नी को मिलती है। बताओ तब कैसे मैं इस अनहोने संबंध को स्वीकार करूं? स्वीकार करना भी चाहता हूं लेकिन स्वीकार नहीं कर सकता। मैंने अपने माता–पिता को तुम्हारे बारे में बताया हुआ है। अगर चाहो तो तुम उनसे मिल सकती हो।'' गौरव का अंतिम वाक्य सुनकर तूलिका को लगा जैसे चातक को वर्षा के जल की बूंद हाथ लगी हो। वह तुरंत तैयार हो गई।

गौरव गाड़ी चलाने लगा। तूलिका अपने मस्तिष्क में उठ रहे बवंडरों को शांत करने में लगी हुई थी। गाड़ी में गीत बज रहा था ''तेरी मेरी, मेरी तेरी प्रेम कहानी है मुश्किल, दो लफ्जों में ये बयां न हो पाए।'' गीत सुनकर तूलिका अपने प्रेम की गहराइयों को नाप रही थी और गौरव को देख रही थी।

गौरव का आलीशान घर था। ड्राइंग रूम में अद्भुत कलाकृतियां व्यक्ति के कला–प्रेमी होने को दर्शा रही थीं । आज पहली बार तूलिका के कदम यहां पड़े थे। घर की स्वच्छता व कला ने भी तूलिका को गौरव पर गर्व करने का अवसर दे दिया था। उसने गौरव की ओर नज़र भर देखा। इस समय वह भी असमंजस की स्थिति में था लेकिन आत्मविश्वास उसे सुदृढ़ बनाए हुए था।

कुछ ही देर में गौरव के माता–पिता आए। तूलिका परेशान तो थी ही उसने एक मिनट भी नहीं लगाया और गौरव की मां के गले से लिपट कर रोने लगी। उसके आंसुओं का बांध समन्दर बनकर बह निकला। गौरव की मां अंजना ने उसे चुप कराया। रोने के बाद जब तूलिका के आंसू थमे तो उसने स्वयं को हल्का महसूस किया । वह बोली, ''आंटी, मुझे बहुत डर लग रहा है। मैं गौरव के साथ घर बसाना चाहती हूं। भला ऐसा क्यों संभव नहीं है?'' अंजना बोली, ''बेटा, ईश्वर की दया से हमारे पास पैसे की कोई कमी नहीं है। हमने तो गौरव को सर्जरी कराने के लिए भी कहा। लेकिन वह कहता है कि उसका जिस रूप में जन्म हुआ है, वह उसी रूप में जीना चाहता है, उस पर कृत्रिम आवरण नहीं ओढ़ना चाहता। मुझे लगता है कि हर व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व और जीवन को चुनने का पूरा हक होना चाहिए। इसलिए हमने उस पर कोई दबाव नहीं डाला। जीवन साथी चुनना एक बहुत बड़ा फैसला है, इसके लिए तुम्हें अपने माता–पिता से बात अवश्य करनी होगी। उनकी स्वीकृति व अस्वीकृति जानना तुम्हारे लिए अनिवार्य है। बिना उनके कोई भी कदम मत उठाओ।''

गौरव के पिता अनंत बोले, ''हां बेटा, तुम्हारे माता–पिता को इसकी ख़बर होनी ही चाहिए और तुम एक साहसी लड़की हो। गौरव हमें तुम्हारे बारे में बता चुका है। हम तैयार हैं। अब अगला कदम तुम्हें अपूर्व आत्मविश्वास से उठाना होगा।''

कुछ ही देर में अंजना चाय–नाश्ता लेकर आई। चाय नाश्ता करते हुए वह तूलिका को गौरव की उपलब्धियों व बचपन के बारे में बताने लगी। तूलिका गौरव की उपलब्धियों को सुनकर स्वयं की पसंद पर नाज कर उठी। उसने निश्चय कर लिया कि चाहे सारी दुनिया उसकी विरोधी हो जाए किंतु वह उससे गौरव को अलग नहीं कर सकते।

प्रिया का लगातार फोन आ रहा था। तूलिका बोली, ''मां का फोन आ रहा है। अब मैं चलती हूं।'' गौरव बोला, ''रुको, तुम्हें घर छोड़ आता हूं।''

जैसे ही तूलिका गाड़ी से उतरी वह गौरव का हाथ पकड़ कर बोली, ''गौरव आज आर या पार। तुम भी इस समय मेरे साथ अंदर चलो। आज मुझे अपनी हिचक तोड़नी ही होगी।'' गौरव कुछ सोचकर तूलिका के साथ हो लिया। आख़िर एक न एक दिन तो यह होना ही था।

दोनों ने घर के अंदर प्रवेश किया। आरव कम्प्यूटर पर बैठा था। पिता टी.वी. देख रहे थे और प्रिया किचन में थी।

तूलिका ने गौरव को बिठाया और फिर माता–पिता व आरव को ड्राइंग रूम में लेकर गई। ड्राइंग रूम में गौरव को देखकर चौंकने की बारी तीनों की थी। तीनों ने एक साथ प्रश्न किया –कौन है ये? तूलिका ने अपने सूखे होंठों पर जीभ फेरी, अपनी नम आंखों को पौंछा और बोली, ''यह गौरव हैं। मैं इन्हें अपना जीवनसाथी बनाना चाहती हूं।'' तूलिका को ऐसा बोलते देख माता–पिता व आरव तीनों दंग रह गए। आरव चीख कर बोला, ''तूली, पागल हो गई हो क्या? कौन है यह? यह असामान्य व्यक्ति तुम्हारा पति बनने लायक है।''

माता–पिता भी अपनी बेटी का बौखलाया रूप देखकर परेशान थे। आरव व गौरव की हाथापाई होते–होते बची। बात बढ़ती देख तूलिका बोली, ''अगर आपको गौरव का साथ मंजूर है तो आप फोन पर मुझे संपर्क कर के बता सकते हैं। तब तक मैं गौरव के घर जा रही हूं।'' आरव व पिता ने तूलिका को रोकने का प्रयत्न किया लेकिन तूलिका पर तो जैसे कोई भूत सवार था। शायद अद्भुत प्रेम ने उसमें असीमित शक्ति का संचार कर दिया था । वह बोली, ''गौरव जल्दी मुझे यहां से ले कर चलो।''

लेकिन प्रणव और आरव ने तेजी से घर का दरवाजा बंद कर दिया। आरव ने तूलिका को घसीटते हुए एक कमरे में बंद कर दिया। इसके बाद पुलिस को बुलाकर गौरव को उनके हवाले कर दिया।

तूलिका लाख चिल्लाती रही कि वह अपनी मरजी से गौरव के साथ आई है। लेकिन किसी ने उसकी एक न सुनी।

प्रिया तूलिका से बोली, ''बेटा, तुमने ऐसे व्यक्ति से प्रेम कैसे कर लिया जिससे विवाह करना असंभव है। कभी भी समाज और परिवार इस बात को नहीं मानेगा।'' दोनों मां–बेटी आंसू बहाती हुई एक–दूसरे के गले लगी हुई थीं। इस समय तूलिका पर सबसे ज्यादा गुस्सा आरव को आ रहा था। वह उसकी जान लेने को आतुर था।

कुछ ही समय में यह ख़बर आग की तरह चारों ओर फैल गई। मीडिया इस अद्भुत प्रेम की खबर को चारों ओर फैलाने के लिए आतुर होकर तूलिका व गौरव के घर के आगे जम गया। हल्क़ी सी भी बात की आशंका टी.वी. के जरिए सब ओर फैल गई।

किन्नर समुदाय, प्रेमी जोड़े, गे व लेस्बियन समुदाय के लोग एकत्रित होकर गौरव व तूलिका के बचाव में उमड़ पड़े। उधर पूरी जनता गौरव को जान से मार देने को आतुर नजर आई।

पन्द्रह दिन तक यह समाचार प्रिंट व इलैक्ट्रोनिक मीडिया की हॉट न्यूज़ बना रहा। सोलहवें दिन गौरव को मुक्त कर दिया गया। अनेक सामाजिक संस्थाओं के साथ–साथ, विशिष्ट समुदाय के एकजुट होने के कारण गौरव सकुशल मुक्त हो गया।

सभी लोग गौरव की एक झलक पाने को आतुर थे। तभी भारी भीड़ में से कुछ गोलियां चलीं जो सीधा गौरव को भेदते हुए दूर तक निकल गईं। गौरव लड़खड़ा कर गिर पड़ा। समूची भीड़ में अफरा–तफरी मच गई। गोली मारने वाला कौन था? भारी भीड़ में पता नहीं चला। तुरंत गौरव को अस्पताल में भरती कराया गया। गौरव पर खुफिया मीडिया की खबरें समाचार के माध्यम से जनता तक पहुंच रही थीं।

तूलिका भी टी.वी. पर नजरें गड़ाएं थीं। गौरव जीवन व मौत से जूझ रहा था। तूलिका की हालत विक्षिप्त सी हो गई थी। प्रिया के हाथ लगाने पर वह उसे खाने को दौड़ती थी। कुछ ही देर में थके–हारे आरव ने घर में प्रवेश किया और टी.वी. पर ब्रेक्रिंग न्यूज आई, ''आखिर प्रेम के दरिंदों ने एक मासूम प्रेम की जान ले ली। अथक प्रयत्नों के बाद भी गौरव को बचाया नहीं जा सका। उसकी आख़िरी सांस तूली कहते हुए निकली......।'' तूलिका के साथ–साथ यह समाचार प्रिया, आरव व प्रणव तीनों ने सुना। तूलिका खबर सुनकर पलकें झपकना भूल गई। तभी आरव का थका–हारा स्वर निकला, ''आख़िर निशाना बनाकर गोलियां चलाई थीं .. ..बचता भी कैसे?'' तभी तूलिका का विक्षिप्त व डरावना सा चेहरा आरव की ओर घूमा और एक खौफनाक अट्टहास पूरे कमरे में गूंज उठा जिसने प्रिया, प्रणव व आरव तीनों को भय से जड़ कर दिया। •

पता : 3, डी.डी.ए फ्लैट्स, खिड़की गांव,
मालवीय नगर, नई दिल्ली–110017
मो. : 9971125858

वक्त रहते

❑ रोचिका अरुण शर्मा

आज उसे गहरा सदमा लगा था उसने कभी ख़्वाबों में भी कल्पना नहीं की थी कि यह दिन देखना पड़ेगा.......झंझावात में उसका मन रह–रह कर अपनी बड़ी बहिन को याद कर रहा था, जी चाहता था कि उसके चरणों में अपना सर रख कर रो ले किन्तु हिम्मत न थी कि एक फोन कर अपने मन को हल्का कर सके।

कितनी बार अप्रत्यक्ष रूप से उसकी बड़ी बहिन ने उसे समझाने की कोशिश की थी किन्तु उसे लगता था वह जो कर रही है उसके एक मात्र बेटे के लिए वही उचित है। वह क्यों किसी से पीछे रहे, वह क्यों किसी की सुने, हर क्षेत्र में अव्वल देखना चाहती थी वह उसे। हर रिश्ते को ताक पर रख वह अपनी कुबुद्धि अपने लाडले के पालन–पोषण में इस्तेमाल कर रही थी।

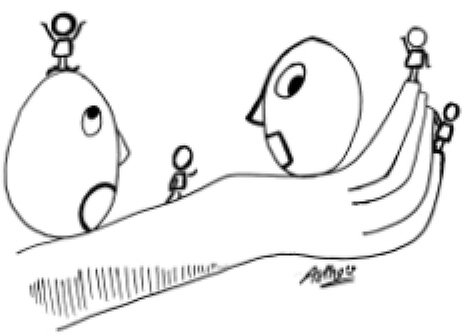

अक्सर वह कहती कि जमाना बदल गया है अब इस जमाने में कौन आदर्शवादी बातें अपने बच्चों को सिखाता है। आस–पास का वातावरण ही दूषित है इसमें साफ–सुथरे व्यवहार के सीधे–सादे बच्चे तो रोज पिट कर आयेंगे। सो घर में बच्चे के साथ गद्दा लगा कर कुश्तियाँ लड़ना, उठा–पटक करना उसका रोज का खेल था। मासूम बच्चा क्या समझे जिस तरह शेरनी अपने बच्चे को शिकार सिखाती है, हिरणी अपने बच्चे को तेज कुलाचें भरना सिखाती है और उनके बच्चे जाने–अनजाने साथ रह कर जंगल के सब गुर सीख ही लेते हैं, उस मासूम ने भी माँ ने जो सिखाया खुशी–खुशी, खेल–खेल में सीख ही लिया।

जब वह अपने बच्चे को दूसरे बच्चों के साथ चालाकी कर हारी बाजी जीतते हुए देखती तो मन ही मन फूली न समाती। अपनी अध्यापिका के सामने भी उसे न कोई डर था न ही तमीज। होशियार इतना कि मुस्कुरा कर और जिद कर अपनी हर बात मनवा लेता। अक्सर उसका कहना होता "सब यह कर सकते हैं तो मैं क्यों नहीं, सब के पास फलां वस्तु है मेरे पास क्यों नहीं" वैसे तो बच्चे के भोले मुख से ऐसी बातें सुनना मन को बड़ा भाता है किन्तु तब तक ही जब तक बच्चे में मासूमियत हो।

यदि बच्चे की मानसिकता धीरे–धीरे दूसरों से बराबरी और ईर्ष्या की बनती जा रही हो तब यह उस बच्चे के स्वयं के लिए ही हानिकारक होता है। लकिन उसकी माँ तो अपने पुत्र के

अंधे प्रेम में पगलाई जा रही थी और किसी और के भले–बुरे के बारे में न सोच कर अपने स्वार्थी व्यवहार के चलते अपने ही बहिन–भाई की नजरों में खटकने लगी थी।

एक बार उसकी बड़ी बहिन मीता अपनी बेटी के संग विदेश से भारत आयी, वह बड़ी प्रसन्न थी कि अपनी छोटी बहिन के घर रुकेगी और दोनों साथ–साथ घूमेंगे–फिरेंगे। हमउम्र बच्चे भी साथ रह कर बहुत खुश होंगे। आजकल कहाँ एकल परिवारों में पहले की तरह चचेरे और ममेरे भाई–बहिन लड़ाई–झगड़ा, मौज–मस्ती करते दिखते हैं ?

कुछ दिन दोनों चचेरे भाई–बहन साथ रहेंगे तो कम से कम एक एहसास बना रहेगा कि वे दोनों इस दुनिया में अकेले नहीं आपस में भाई–बहिन हैं।

बड़ी बहिन को देख छोटी जिसका नाम रीता है बहुत प्रसन्न हुई। किन्तु पहले ही दिन जब उसके बेटे रौनक ने एक जोरदार मुक्का बड़ी बहिन की बेटी के मुख पर मारा तो वह दर्द से कराह उठी और रोती हुई अपनी माँ व मौसी के पास आयी "मॉम मुझे रौनक ने जोर से मुँह पर मारा"

"कोई बात नहीं बेटी शिकायत नहीं करते, खेल–खेल में अक्सर ऐसा हो जाता है।" रीता की बड़ी बहिन मीता ने अपनी बेटी को गले लगा लिया था।

"पर मॉम उसने बहुत तेज मारा, मेरा परमानेंट टीथ भी आ चुका है यदि वह टूट जाता तो ?"

"ह्मम्म यह तो सही है मौसी को बताओ।"

रीता भी वहीं बैठी सब सुन व देख रही थी पर उस समय उस ने बच्ची की शिकायत को नजर अंदाज कर दिया।

बड़ी बहिन मीता भी एक बार को चुप हो गयी।

किन्तु मीता को वहाँ पंद्रह दिन बिताने भी भारी महसूस हुए। रौनक तो किसी जंगली बच्चे सा था, उठा–पटक मारपीट में उसे तो मजा आता। किन्तु मीता की बेटी जो पूरी तरह से अनुशासित थी वह तो अक्सर रोती ही दिखाई देती। उस पर भी तकलीफ यह थी कि बच्चा तो बच्चा है गलती करेगा ही किन्तु उसकी माँ तो कम से कम उसके गलत व्यवहार की हिफाजत न करे, उसे उसकी गलती का एहसास तो कराये पर जो माँ स्वयं ही पुत्र के मोहपाश में जकड़ी हो उससे क्या उम्मीद की जा सकती है भला ?

उस ने वहाँ रहना उचित न समझा सो उसी शहर में अपने भाई के घर चली गयी। वहाँ भाई के बच्चे के साथ सब सही रहा। दोनों चचेरे भाई–बहन खूब साथ खेलते साथ खाते–पीते। रविवार आया भाई ने कहीं घूमने का कार्यक्रम बनाया तो सोचा छोटी बहिन के परिवार को भी साथ में ले लिया जाए।

सब साथ में लोनावाला इमैजिका गए। क्या बच्चे क्या बड़े सभी राइड्स का खूब मजा ले रहे थे। जहाँ सामूहिक राइड्स थे और पूरा परिवार एक साथ बैठ सकते थे वहाँ तो सब ठीक किन्तु जहाँ कतार लगाना होता रौनक तो धक्का–मुक्की कर सबसे आगे। किन्तु अब समस्या थी कि भाई का बच्चा उस से बड़ा और समझदार था। रौनक उस के सामने ज्यादा मारपीट करने में डरता और धक्का–मुक्की करने में भी जीत न पाता। सो रीता को वहाँ अपने बच्चे को मार–पिटाई में पिछड़ते देखना खलने लगा था।

बड़ा भाई अपने अनुसार सब का मार्गदर्शन करता और कतार में खड़े कर देता। रीता कैसे भी बीच–बचाव कर अपने रौनक को ही सबसे आगे रखने की कोशिश करती।

मीता उसके व्यवहार को पूरी तरह से परख रही थी, मन ही मन सोच भी रही थी कि अपने बच्चे के लिए इतनी उतावली हो जाती है और अपने ही भाई–बहिन के बच्चे के साथ ये कैसा व्यवहार करती है। उसे उसका भेदभावपूर्ण व्यवहार बहुत अखर रहा था। किन्तु कुछ दिनों के लिए मेहमान बन कर आयी है यह सोच उसने चुप रहने में ही भलाई समझी। किन्तु उसे अपनी ही छोटी बहिन का यह रवैया बहत बुरा लगा भला कोई भाई–बहिन के बच्चों में भी फर्क करता है ? फिर कैसे रिश्ते कैसे चचेरे भाई–बहन ?

खैर वह तो छुट्टियाँ बिता कर चली गयी। रौनक की शैतानियाँ दिन पर दिन बढ़ती जा रही थीं। अब तो स्कूल से भी शिकायतें आने लगीं थीं पर रीता किसी न किसी तरह से बहाने बना और दूसरे बच्चों पर आरोप लगा अपने रौनक का बचाव करने में सफल हो जाती।

ऐसे ही रौनक बड़ा हो रहा था और साथ में उसकी कुबुद्धि माँ व रौनक की हिम्मत भी बढ़ रही थी। अपने आप को सफल माँ समझ वह उसे आये दिन चालाकियों के नए गुर सिखाती।

हाँ, उसके पति कई बार कहते "देखो रीता ये मारामारी ठीक नहीं, क्यों ये सब हिंसा सिखाती हो इसे?" पर वह थी कि किसी की सुनती ही नहीं, पति बेचारा मन मसोस कर रह जाता।

हाँ, एक बात खास थी रौनक में वह अपनी माँ की बात एक इशारे में समझता था और उसका मुख्य कारण था कि वह रौनक की हर जरूरत अपनी शर्तें मनवा कर पूरी करती।

सो वह समझ गया था कि माँ की बात तो माननी है अन्यथा उसका खर्चा–पानी बंद। रीता इस खुशफहमी में थी कि रौनक उसकी हर बात मानता है, बड़ा ही आज्ञाकारी है। जबकि उसके अलावा वह किसी और की सुनता ही नहीं था। बड़े–छोटे का कोई लिहाज ही नहीं, अपशब्दों का भी इस्तेमाल करने लगा था जिसका बचाव रीता यह कह कर लेती कि सोसायटी के दूसरे बच्चों से सीख लेता है।

एक बार किसी के यहाँ मेहमान बन कर गए, उन्होंने कांच के गिलास में शेक दिया सभी महिलाओं ने अपने बच्चों को हिदायत देते हुए कहा "नीचे बैठ कर पी लो वरना तुम फैला दोगे आंटी का नया सोफा खराब हो जाएगा और सभी बच्चे एक बार में बात मान गए। लेकिन रौनक टस से मस नहीं हुआ। रीता वहीं बैठी यह सब देख रही थी, किसी महिला ने रौनक से फिर से कहा "रौनक तुम भी नीचे बैठ जाओ" वह फिर भी नहीं हिला तो मेजबान महिला ने भी दो टूक शब्दों में कह ही दिया "देखो रौनक तुम एक काँच का गिलास तो तोड़ चुके हो, अब यह शेक मत फैला देना। ज्यादा अच्छा है कि तुम नीचे बैठ जाओ। "इतना बोलना था कि रीता द्वारा रौनक का पक्ष लेना था "कैसी आंटी हो आप उस बेचारे को शेक भी नहीं पीने दे रही हो।" मेजबान महिला अपना सा मुँह ले कर रह गयी, सोचा एक ही दिन की बात है झेलो।

न जाने कितनी ही ऐसी घटनाएँ घटीं पर हर बार रौनक को रीता बचा लेती। कुछ बरस बीते, मीता फिर एक रिश्तेदार के विवाह में अपने देश भारत आई। सब रिश्तेदारों से मिल कर वह बहुत प्रसन्न थी, बच्चे भी आपस में बहुत खुश थे। उसकी बेटी भी पिछली बातों को भूल चुकी थी। मीता चाहती थी कि वह भारत आई है तो उसकी बेटी हिन्दी भाषा जरूर सीखे और बोले भी सो कुछ बाल पत्रिकाएँ ले आयी और सब बच्चों में बाँट दी। सब में नयी कहानियाँ पढ़ने का उत्साह व होड़ लगी थी। बच्चे किताबें आपस में बदल–बदल कर भी पढ़ रहे थे।

तभी रौनक ने पुस्तक के लिए छीना–झपटी करना शुरू किया जबकि उसे भी पुस्तक मिली थी, और मीता की बेटी को लातों एवं घूँसों से मारना शुरू किया। सब बैठे थे किन्तु कोई मुँह से कुछ न बोला। रौनक की माँ रीता स्वयं भी बैठी हुई यह सब देख रही थी किन्तु उसने भी चुप्पी रखी तो मीता से रहा न गया और गुस्से में बिफर पड़ी "गुंडा बना ले अपने बेटे को बैठी देख रही है कुछ कहती क्यों नहीं ?"

माहौल गर्म हो चुका था, सभी रिश्तेदार वहाँ से एक–एक कर खिसकने लगे थे। मीता ने भी अपनी बेटी को वहाँ से हटा लिया और उसके बाद वह कभी भारत नहीं आई।

सारी पुरानी बातें याद कर रीता आहत मन से अपनी बड़ी बहिन मीता का फोन नंबर डायल करने की कोशिश कर रही थी, किन्तु उंगलियाँ थीं कि स्वतः ही रुक जातीं। आज उसे अपनी बड़ी बहिन की बात बहुत सत्य होती नजर आ रही थी। उसके भाई व दूसरी बहिन ने भी उस से किनारा कर लिया था। आस–पास के लोग बातें बनाने लगे थे। लिफ्ट में आते–जाते भी उसे शर्म महसूस हो रही थी। अखबार और टी.वी. के सभी चैनल बार–बार उसके बेटे की खबर को मसाला लगा कर दिखा रहे थे। उस ने परेशान हो कर अपने पति से विनती की "कैसे भी कर के मेरे रौनक को बचाओ मैं कुछ नहीं जानती, चाहे कितने भी रुपये खर्च हों।"

ह्म्म पूरी कोशिश कर तो रहा हूँ किन्तु यहाँ रुपये नहीं चलेंगे रीता, उस लड़की की माँ बड़ी वकील है और उन्होंने कोर्ट में केस किया है। बलात्कार का केस है तुम्हारे बेटे पर, कोई छोटा केस नहीं है। अभी कॉलेज में दाखिला मिला और हॉस्टल में जाते ही ऐसी वारदात को अंजाम दे दिया। कॉलेज वाले भी कोई जिम्मेदारी लेना नहीं चाहते उनका भी नाम खराब होता है सो कॉलेज से भी निकाल दिया गया है वह, कल फोन आया था वहाँ से भी।

किसी को मुँह दिखाने लायक नहीं छोड़ा तुम्हारे बेटे ने और इसका दोषी मैं तुम्हें मानता हूँ , तुमने परवरिश ही ऐसी की।

"चुप रहो अब ये भाषण मुझ पर न झाड़ो।" रीता ने तैश में आकर कहा।

यहाँ तो तुम मुझे चुप करवा लो, लेकिन किस–किस का मुँह बंद करावोगी तुम ? हकीकत कभी बदल नहीं सकती। अब तो सच से पर्दा हट ही गया है। तुम्हारी बड़ी बहिन ने तुम्हें चेताया था, किन्तु तुमने उसका भी अपमान किया। कोई एक भी रिश्तेदार या दोस्त है तुम्हारा जो इस वक़्त मदद करे ? सिर्फ बन–ठन कर पार्टियाँ करती रही और दूसरों की देखा–देखी बच्चे को हिंसक बनाती रही।

"अरे ! बच्चे में दयाभाव का बीजारोपण करना चाहिए, किसी को मारना, छेड़–छाड़ कर आनंदित होना, किसी को बुरे शब्द बोलना किस पुस्तक में लिखा है कि ये आगे बढ़ने के लिए जरूरी हैं ?"

मुझे याद है जब वह छः बरस का था, स्विमिंग रेस में जब वह अपार्टमेन्ट की लड़की से पीछे रहने लगा उसने उस लड़की का पाँव पीछे से खींचा था। उसकी माँ ने बहुत

हंगामा भी किया किन्तु तुमने अपनी दलीलों से उसे हरा दिया। वह महिला क्षुब्ध मन से वहाँ से चली गयी किन्तु तुम्हें शर्म न आयी बल्कि अपने सुपुत्र और अपनी होशियारी पर गर्व हुआ तुम्हें।

"यदि मारना सिखाया भी तो आत्म रक्षा के लिए उचित है, दूसरे कमजोर बच्चों पर अपना वर्चस्व जमा कर यदि वह जीत भी गया तो क्या कभी उस से भारी कोई नहीं आयेगा ?"

"उसी का नतीजा है यह, लड़कियों से छेड़–छाड़ तो करता ही था। फिकरे कस कर भी बहुत मजा आता था उसे, अब बलात्कार ही कर डाला वह भी वकील की बेटी का। कुछ तो अच्छा सिखाया होता अपने सुपुत्र को तुमने। सिर्फ अपना–पराया ही सिखाती रही और तो और भाई–बहिन के बच्चों में भी भेदभाव करती रहीं तुम।"

"अब तुम यही सब बोलते रहोगे या रौनक के लिए कुछ सोचोगे ?" रीता ने पलटवार किया था।

उसके पति ने अपने दोस्तों को फोन करना शुरू किया। किन्तु कहीं से मदद के कोई आसार नजर नहीं आ रहे थे।

वह रह–रह कर अपनी बहन मीता को फोन करने को सोच रही थी। विदेश जाने से पहले वह भारत में वकालत करती रही थी, उसके कोई तो दोस्त या पहचान वाले होंगे जो इस समय उसकी मदद कर सकें और रौनक को बचा सकें।

वह अपने पति के सामने हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाई "सुनो तुम दीदी को फोन करो न तुम्हारा कहा कभी नहीं टालेंगी वो"

सब समझती हो न तुम अपना व्यवहार ? तभी मुझे कह रही हो फोन करने को। याद करो वे दिन जब रौनक दीदी की बेटी को मारता–पीटता था और तुम जानबूझ कर नजर अन्दाज कर देतीं थी।

"अरे ! कभी तो उसे लड़कियों का सम्मान करना सिखाया होता। काश दूसरों के रिसते जख्म पर कभी मरहम लगाया होता, काश ! दूसरों को प्रसन्न देख ईर्ष्या न कर उनके साथ खुश हुआ होता वह भी। क्या ये सब सफल इंसान की निशानी नहीं ?"

"यदि उस लड़की ने रौनक का प्रेम प्रस्ताव ठुकरा दिया तो वह उस का बलात्कार कर दे ?"

"तुम्हारा बेटा गुनाहगार है उसे सजा काटने दो, वही ज्यादा अच्छा है। अभी तो अट्ठारह का नहीं हुआ जुवेनाइल कोर्ट सजा देगा। यदि इस बार भी उसका बचाव किया तो किसी दिन खून के केस में जेल जाएगा। जो किया है उसे तो भुगतना ही पड़ेगा न, इज्जत तो वैसे भी नहीं हमारी कहीं। न कोई रिश्तेदार हमारे साथ है और न ही कोई पड़ोसी।"

"तुम आज भी सिर्फ अपने ही बेटे के बारे में सोच रही हो। क्या उस लड़की के दर्द का एहसास भी है जो इस बलात्कार के दंश को जीवन भर भोगेगी ? उस के नाजुक शरीर और "कोमल मन पर क्या बीत रही होगी वह भी सोचती हो तुम ? एक महिला हो उस बच्ची के दर्द को महसूस करो फिर कहो। यदि उस की जगह वह तुम्हारी अपनी बेटी होती तो ?"

"पर तुम्हें क्या खौफ ? कैसी तड़प ? ईश्वर ने तुम्हें तो पुत्र–रत्न से नवाजा है न।"

"ज्यादा अच्छा है जिस लड़की का बलात्कार किया उसकी माँ से माफी माँग कर समझा–बुझा कर सजा को कम करवा लें।"

"कैसे बाप हो तुम अपने बेटे को सजा दिलवा कर खुश होंगे ?" रीता चीख पड़ी थी।

"मेरे हाथ में कुछ है ही नहीं, कर भी क्या सकता हूँ मैं लाचार हूँ, सजा से भी यदि वह सुधर जाए तो चमत्कार होगा।"

रीता आज अपने किये पर बहुत पछता रही थी। "काश! उसने अपने बेटे में संस्कारों का बीजारोपण कर समय पर उचित व्यवहार का खाद–पानी भी दिया होता तो आज वह किसी फलदायक पेड़ में फलीभूत हुआ होता। सब उसी के किये का नतीजा ही तो है कि वह आज एक हिंसक जानवर बन गया है। बच्चों से खिलौने, पुस्तकों की छीना–झपटी करते–करते अब वह सहपाठी लड़कियों से भी मनमानी करना चाहता है। फिर वह सफल न हो तो अपने आप को सफल दिखाने हेतु बलात्कार भी कर सकता है। कहा से आयी उसमें ऐसी हिंसक प्रवृत्ति ?"

"काश ! उसने वक़्त रहते अपनी बड़ी बहिन की बात पर गौर किया होता" उसका माथा भन्नाने लगा था और वह बेसुध हो गयी थी। •

पता : ए2–103, कासाग्रैंड, एमेथिस्ट, एलकॉट
एवेन्यू, शोलिंगनल्लूर, चेन्नई –600119, तमिलनाडु
मो. : 9597172444

लौटना

❑ सुशांत सुप्रिय

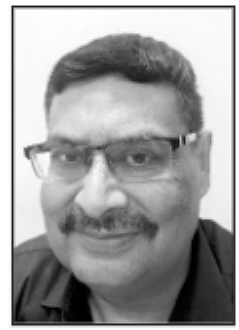

अध्ययन–कक्ष में रखी अल्मारियों में भरी किताबों में पिता की आत्मा बसती थी। इस बड़े कमरे में लगभग दस अल्मारियाँ थीं। इनमें से छह अल्मारियाँ अंग्रेजों के जमाने या उससे भी पहले की बनी थीं। मजबूत लकड़ी से बनी ये अल्मारियाँ पिता को अपने पूर्वजों से विरासत में मिली थीं। इनमें बहुत पुरानी पुस्तकें और पांडुलिपियाँ भरी पड़ी थीं। कुछ पांडुलिपियाँ तो ताम्र–पत्रों पर लिखी हुई थीं। पिता कभी–कभी अपनी इस धरोहर से धूल साफ करते हुए उन्हें सहेज कर रखते। वे हमें बताते कि पूर्वजों से होती हुई कई विरल पुस्तकें उन तक पहुँची थीं। इनमें 'गीता' और 'रामायण' की प्राचीन–काल और मध्य–काल की पांडुलिपियाँ भी मौजूद थीं। शेष चार अल्मारियों में पिता के जमाने की पुस्तकें भरी हुई थीं।

हमें इन अल्मारियों को छूने की सख़्त मनाही थी। हालाँकि पिता जब बाहर गए होते तो कई बार मैं चोरी–छिपे उनके अध्ययन–कक्ष में चला जाता और पूर्वजों से मिली इन किताबों की रहस्यमयी दुनिया की चौखट पर खड़ा हो कर इन्हें निहारता और इनके बारे में सोचने लगता। पिता बताते थे कि उनके परदादा बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र के जमाने के ब्रज–भाषा के एक जाने–माने लेखक और कवि थे। एक बार पिता ने मुझे पीले पड़ चुके पन्नों वाली एक किताब दिखाई जिसका शीर्षक था : 'चार दिशाएँ, दस कहानियाँ'। पूछने पर उन्होंने बताया कि इस किताब के लेखक उनके दादाजी थे। इस अध्ययन–कक्ष की दीवारों पर कई प्रभावशाली लोगों की तस्वीरें लगी थीं। पिता बताते थे कि ये सभी हमारे पूर्वज थे।

हमारे पूर्वज जमींदार थे। वे पढ़ने–लिखने के साथ–साथ शिकार भी खेला करते थे। अध्ययन–कक्ष की एक दीवार पर एक बड़े बाघ की विशाल खाल टँगी हुई थी। पिता बताते थे कि एक बार जब अंग्रेज बहादुर लाट् साहब उनके इलाके में शिकार खेलने आए तब एक खूंखार बाघ ने उन पर हमला कर दिया। उस समय पिता के परदादा ने अपनी जान पर खेल कर अकेले ही इस बाघ से मुकाबला किया था और खुद घायल हो जाने के बावजूद अपने हाथों से उसका जबड़ा फाड़ कर उसे मार डाला था। पिता के परदादा की इस बहादुरी से खुश हो कर लाट् साहब ने उन्हें 'राय बहादुर' का खिताब दिया था। उसी बाघ की ऐतिहासिक खाल पिता के अध्ययन–कक्ष की शोभा बढ़ा रही थी।

पूर्वजों से मिली वे छह अल्मारियाँ अपने भीतर एक रहस्यमयी दुनिया समेटे थीं। मुझे

लगता, जब पिता उन अल्मारियों को खोलते तो वे जैसे अतीत की दुनिया में प्रवेश कर जाते थे। तब शायद वे अपने पूर्वजों को फिर से देख पाते थे, उनसे बातें कर पाते थे। पूर्वजों के भी इस दुनिया में आने का माध्यम उन अल्मारियों में रखी किताबें ही थीं। कई बार मुझे लगता जैसे उन खुली अल्मारियों में रखी किताबें व पांडुलिपियाँ उलटते–पलटते पिता किसी से बातें कर रहे हों। क्या उन जादुई अल्मारियों में रखी उन किताबों की दुनिया में हमारे मृत पूर्वज जीवित हो उठते थे ? मैं निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता था लेकिन एक बात स्पष्ट थी। पिता का दिल उन किताबों और पांडुलिपियों के लिए ही धड़कता था। जीवन के भीतर ही उन्होंने अपने लिए एक और जीवन ईजाद कर लिया था।

दुबे जी पिता के अभिन्न मित्र थे। यह मित्रता साथ पढ़ने–खेलने और बड़े होते हुए एक ही तरह के सुख–दुःख सहने की वजह से विकसित हुई थी। कई बार मुझे लगता कि क्या पता, दुबे जी और पिता ने जीवन में एक ही तरह की बीमारियाँ भी झेली होंगी। पिता की तरह दुबे जी भी साहित्य–प्रेमी थे। वे शहर के कॉलेज में पिता के साथ ही हिंदी के प्राध्यापक थे। अक्सर वे अपने बेटे पलाश के साथ हमारे यहाँ आते। दुबे जी और पिता बातों में व्यस्त हो जाते और पलाश का ख़्याल रखने की जिम्मेदारी हम भाई–बहनों पर आ जाती। ऐसे में हम सब बाहर लॉन में क्रिकेट, फुटबॉल और बैडमिंटन खेल कर अपना समय बिताते।

अब मैं इस नतीजे पर पहुँच चुका था कि पिता के लिए वे छह अल्मारियाँ और उन में रखी किताबें पूर्वजों की दुनिया में जाने का प्रवेश–द्वार थीं। सेतु थीं। पुरानी हो चुकी पांडुलिपियों और जर्जर, पीले पन्नों से आती खुशबू पिता को ऊर्जा देती थी। जब तक यह अमृत मौजूद था, पिता जैसे अमर थे। इन किताबों और पांडुलिपियों के बीच पिता की आँखों में जैसे एक दिव्य ज्योति आ जाती। उनका मुख–मंडल जैसे एक अलौकिक आभा से दीप्त हो जाता। कई कहानियों में मैंने पढ़ा था कि किसी की जान तोते में बंद होती थी। जब तक वह तोता सुरक्षित था, उस व्यक्ति को कुछ नहीं हो सकता था। कई बार मुझे लगता जैसे पिता की जान उन अल्मारियों में रखी, पूर्वजों से मिली उन पुस्तकों और पांडुलिपियों में सुरक्षित थे।

एक बार दीवाली की शाम पाँच बजे दुबे जी और उनका बेटा पलाश मिठाई ले कर हमारे यहाँ आए। दुबे जी और पिता ड्राइंग–रूम में बैठ कर बातें करने लगे। पलाश हमारे साथ बाहर लॉन में पटाखे और रॉकेट चलाने लगा। हम सभी बच्चे पटाखे और फुलझड़ियाँ चलाते हुए खूब मौज–मस्ती कर रहे थे। मैंने बोतल में रख कर एक रॉकेट चलाया। वह बहुत ऊपर जा कर फटा। मेरी देखा–देखी पलाश ने भी बोतल में डाल कर रॉकेट चलाया। पर ऐन मौके पर बोतल अचानक टेढ़ी हो गई। इससे पहले कि हम उसे सीधा कर पाते, रॉकेट उड़ा और घर के अध्ययन–कक्ष की खुली खिड़की में से हो कर भीतर जा कर फट गया। हम सब स्तब्ध रह गए। मैं भीतर अध्ययन–कक्ष की ओर भागा। अल्मारियों में आग लग गई थी। पिता और दुबे जी वहाँ पहले ही मौजूद थे। जरूर टेढ़ी बोतल में से चला रॉकेट उड़ता हुआ खिड़की के रास्ते भीतर आ कर सीधा पूर्वजों वाली अल्मारियों से टकरा कर फट गया होगा। पिता वहाँ बदहवास से खड़े थे जबकि अल्मारियों में रखी किताबें जल रही थीं। फिर अचानक जैसे पिता को होश आया। वे और दुबे जी भाग कर बाल्टियों में पानी भर कर ले आए और आग बुझाने के काम में जुट गए। किंतु आग थी कि भड़कती ही जा रही थी। लगता था जैसे साक्षात् अग्नि देव रौद्र रूप धारण करके वहाँ उपस्थित हो गए थे।

मैं भाग कर दूसरे कमरे में गया ताकि 101 नम्बर पर फायर ब्रिगेड को फोन कर सकूँ। जब मैं वापस लौटा तो पूरा कमरा आग की चपेट में था। एक गहरा काला धुआँ चारो ओर फैल गया था जिसकी वजह से ठीक से कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। यह धुआँ नाक और आँखों में घुसता चला जा रहा था जिसके कारण आँखें मिचमिचा रही थीं, उन में से पानी आ रहा था, और साँस लेना भी दूभर हो रहा था। दुबेजी मुझे बाहर खड़े नज़र आए। मेरे पूछने पर उन्होंने बताया कि पिता अब भी कमरे के भीतर अपनी किताबों को बचाने के लिए एक हारी हुई लड़ाई लड़ रहे थे। थोड़ी देर में अग्नि–शामक गाड़ियाँ आ गईं। आधे घंटे की जद्दोजहद के बाद आग बुझा दी गई। तब तक पूरा कमरा जल कर खाक हो चुका था। पूर्वजों से प्राप्त पिता की वे सारी अमूल्य किताबें और पांडुलिपियाँ भी जल कर भस्म हो चुकी थीं। मेरी आँखें शिद्दत से पिता को तलाश रही थीं। किंतु वे कहीं नज़र नहीं आए। उस दिन के बाद पिता कभी किसी को नज़र नहीं आए। क्या उस दिन पूर्वजों की विरल किताबों और पांडुलिपियों के साथ वे भी जल गए थे? पर कमरे में तो उनका कोई अवशेष नहीं मिला। उनके जल जाने का कोई सबूत नहीं मिला। पता नहीं उन्हें जमीन खा गई या आसमान

निगल गया । क्या अल्मारियों में आग लगने पर उस समय में कोई गुप्त 'पोर्टल', कोई रहस्यमय कपाट खुल गया था जिस में से हो कर पिता अपनी विरल किताबों और पांडुलिपियों समेत पूर्वजों की दुनिया और समय में सुरक्षित चले गए? जो भी हो, जिस दिन यह वाकया हुआ, पिता उसी दिन से गायब हैं। उनकी जान जरूर पूर्वजों से प्राप्त उन विरल पुस्तकों और पांडुलिपियों में ही बसती होगी... •

पता : ए–5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम, गाजियाबाद–201014 (उ.प्र.)
मो. : 8512070086

लघुकथा

आईने के बाहर और अन्य लघुकथाएं

❑ पवन शर्मा

कमरे की चार दीवारें अब दीवारें नहीं रहीं थीं। वे एक गैलरी थीं–असंख्य आँखों की गैलरी। कोई आँख इतनी बड़ी कि उसमें डूबा जा सकता था, कोई इतनी संकरी कि जैसे किसी छोटे से रोशनदान से झाँक रही हो। एक आँख थी जो हमेशा भीगती रहती, एक थी जो जैसे ताने देती हो, और एक थी–जो बस थी, बिना किसी भावना के।

हर सुबह, जैसे ही उसकी नींद खुलती, वह तकिये से सिर उठाता और उन आँखों को गिनने लगता, ''एक सौ बारह... एक सौ तेरह... एक सौ चौदह... ओह! तुम कल यहाँ नहीं थीं... तुम पलट गई हो क्या?'' पास ही खड़ी उसकी माँ, खाट पर पड़ी टूटी चाय की प्याली उठाते हुए रुक जाती। आँखें नम होतीं, पर चेहरा शांत, ''बेटा, दीवारों पर आँखें नहीं होतीं। ये तेरी बनाई हुई दुनिया है... कोई देखेगा तो क्या सोचेगा?''

वो मुस्कराता, लेकिन उस मुस्कान में कोई चंचलता नहीं होती थी, ''माँ, जब अंदर कोई नहीं देखता था, मैंने इन्हें बाहर टाँक लिया। ये मेरी बात सुनती हैं, मेरी थकान समझती हैं।'' माँ चुप रह जाती। उसकी चुप्पी में एक असहाय स्वीकृति थी, जैसे कोई पुराने घाव को सहलाता है–बिना मरहम के।

डॉक्टर हर दूसरे हफ्ते आता। टेबल पर अपने कागज फैलाता, माँ से सवाल करता और लड़के को देखकर चुपचाप उसकी हर हरकत नोट करता, और कहता, ''अक्सर समाज पागलपन या विचित्रता की निगाह से देखता है, जबकि उसके पीछे एक गहरा अकेलापन, अस्वीकार और संवादहीनता छिपी होती है। दीवारों पर बनी आँखें, आवाजें, संवाद... ये सब उसकी आंतरिक टूटन के रचनात्मक रक्षण हैं, पर यह बचाव लंबे समय तक टिकता नहीं। इलाज जरूरी है।''

माँ उसकी दवा समय पर देती, पर कई बार चुपके से एक गोली छोड़ भी देती। माँ बुदबुदाती, ''कहीं इसका इलाज इसकी पूरी दुनिया ही न मिटा दे...''

एक शाम, माँ ने देखा कि वह दीवार पर बनी एक बड़ी–सी आँख को घूरे जा रहा है। उसके चेहरे पर आर्द्रता थी, लेकिन आँसू नहीं, ''माँ... इसने झपकना बंद कर दिया है। ये अब मुझे देखती नहीं। क्या ये भी थक गई?''

माँ पास आई, कुछ देर उस आँख को देखा, फिर चुपचाप अलमारी खोली, आईने के सामने खड़ी हुई। उसने धीरे से अपने चेहरे की झुर्रियों के बीच से अपनी आँखें देखीं। फिर एक गहरी साँस ली और जैसे आईने से कोई चीज उतारी–अपनी एक आँख, जो अब झुर्रीदार थी, पर गीली नहीं थी।

वो उसकी दीवार के एक खाली कोने की तरफ गई। वहाँ एक धुंधली पर अधूरी आँख की रेखा थी। माँ ने वहाँ अपनी आँख बनानी शुरू की–सधी हुई, स्थिर, देखती हुई... पर बिना किसी शोर के, ''लो बेटा, अब एक आँख मेरी भी तुम्हें देखेगी... हर वक़्त।''

वह देर तक माँ की ओर देखता रहा। उसकी खुद की आँखें जो अब तक कमरे के भीतर ही घूमती रहीं थीं, पहली बार आईने के बाहर ठहरीं, ''अब मुझे सच में कोई देख रहा है, माँ...कोई जो भागेगा नहीं, झपकेगा नहीं।''

उस रात वह चुपचाप उठा। उसने दीवार की हर आँख की ओर देखा–एक–एक कर, बिना किसी डर के, फिर वह धीरे–धीरे दीवारों पर चलने लगा। हर आँख पर अपनी उंगलियाँ रखता, उसे सहलाता, और कहता, ''अब तुम सो जाओ... मैं ठीक हूँ।''

एक–एक कर, उसने सारी आँखों को बंद कर दिया। वे अब सिर्फ आकृतियाँ थीं, बिना पुतलियों के, बिना दृष्टि के, लेकिन एक कोने की आँख अब भी खुली थी–माँ की आँख। अगली सुबह डॉक्टर आया। दीवारों की शांति देखकर वह चौंका, ''ये कैसे हुआ?''

माँ ने मुस्कराकर कहा, ''इलाज शुरू हो गया है। उसने पहली बार किसी को आईने के बाहर देखा है... और वो कोई और नहीं, मैं थी।''

पता : विद्या भवन, वार्ड नंबर–17, सुकरी चर्च, जुन्नारदेव, जिला–छिंदवाड़ा (मध्यप्रदेश), पिन 480551
मो. : 9425837079 / 8319714936

रविशंकर पांडेय की चार कविताएँ

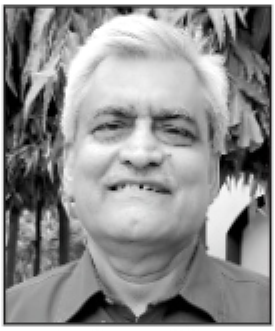

रविशंकर पांडेय

1. दुःख है बहुआयामी

दुःख अपना है
बहुआयामी,
नज़र नहीं
आता यह पूरा
नजरों में
है कोई खामी !
आया था
आगंतुक बन कर
रहने को बस
कुछ दिन घर में
धीरे–धीरे
असली चेहरा
दिखने लगा
महीने भर में,
बोला एक दिन
निकलो घर से
मैं इसका
अब असली स्वामी!
पहले कुछ दिन
होती आई
हम दोनों में
धींगामुश्ती
सहसा एक शाम
आया वह
सीधे मुझसे
लड़ने कुश्ती,
मरता क्या करता
भरता हूं
उसकी सब
बातों पर हामी !
करता रहता
किसिम–किसिम की
लीलाधर प्रभु –
जैसी लीला,
सारे दुःखी दिखें
दुनिया में
यही अकेला
छैल–छबीला,
कौन बचा
इसके चंगुल से
कितना नामी
और गिरामी !!

2. दुःख के दिन

अंतहीन ऊंचे
उजाड़ से
दुःख के दिन
फैले पहाड़ से!
बैठे–ठाले
समय ऊंघता
दिन–दिन भर

बजते सन्नाटे
बियाबान में
रह–रह चुभते
तेज–
अकेलेपन के कांटे,
कौन सुनेगा
इस जंगल में
चींखो कितना
गला फाड़ के!
दोपहरी
ठहरी–ठहरी सी
सुबह उदासी
शाम उदासी
एक सदी का
दर्द समेटे
रात ले रही
ऊबासांसी,
चुप्पी से तो
बेहतर लगता
आओ हम।
रोंएं दहाड़ के !
जीवन की
अंधी सुरंग में
अवसादों के
बिछे पलीते
एक एक पल
बीतें ऐसे
जैसे सौ
मन्वंतर जीते,
घर दफ्तर के
ये परकोटे
परकोटे
लगते तिहाड़ से !!

3. क्या पाया, क्या खोया

सोच रहा हूं
बैठे ठाले
अब तक क्या
पाया क्या खोया!
कागज
काले किया बहुत
दीदे भी फोड़े
काम न आए
टोने–टोटके
कुछ भी थोड़े,
जब भी
हुआ अकेला तब
जी भर कर रोया !
सबका
होने के चक्कर में
हुआ न अपना
पथराई आंखों में
ढोया
टूटा सपना,
नींद चुराकर
औरों की मैं
कभी न सोया!
काम किया
जीवन भर मैंने
अफलातूनी
खाली जेबों में
मेरी अब
भांग है भूनी,
पकी उम्र में
काट रहा
मैंने जो बोया !
उम्र पक गई

हो न सका
मन वीतराग है
रंग उड़ गए
चादर के
रह गया दाग है,
मन मैला
ही रहा बहुत
गंगा में धोया !!

4. सोये में जाग रहा हूं

लगता है
जैसे सोये में
जाग रहा हूं!
फंसा हुआ
टेढ़े प्रश्नों के
चक्रव्यूह में
या कि
व्यर्थताओं के ऊंचे
अगम ढूह में,
खुद से डरकर
उल्टे पावों
भाग रहा हूं !
एक प्रश्न के
सौ–सौ उत्तर
क्या बोलूं मैं
सभी धान
बाईस पंसेरी
क्यों तौलूं मैं,
मुजरिम हूं
खुद को सलीब पर
टांग रहा हूं !
धू–धू कर
जलता दावानल
एक तरफ है
और दूसरी ओर
दूर तक
जमी बरफ है,
मैं प्राणों की
भीख मौत से
मांग रहा हूं !
पग–पग पर
जी कर मरता
मर कर जीता हूं
रोज–रोज
मीठा विष मैं
छककर पीता हूं,
जीवन भर
कुछ यों करता
खटराग रहा हूं।
यह कैसा
विद्रूप हुआ मैं
स्वयं अचानक
आंखें लाल
और चेहरा
हो गया भयानक,
बदहवास
मुंह से निकालता
झाग रहा हूं !!

•

पता : 5/246, गोमतीनगर विस्तार, लखनऊ–226010
मो. : 9140852665

मोहम्मद आक़िब ख़ान की एक कविता

मोहम्मद आकिब ख़ान

उत्तर प्रदेश मेरी पहचान प्यारा

ज़मीं की गोद में, गंगा—यमुना की धारा,
उत्तर प्रदेश.... मेरी पहचान प्यारा।
यहाँ लोकगीतों की गूंज, बहती है हवाओं में,
हर बोल में संस्कृति, हर शब्द में भावों में।

ब्रज की मिट्टी में, राधा—कृष्ण की लीला,
अवधी के बोलों में, छिपी है विरासत गहरी।
कहरवा, सोहर, चनैनी, नौका झक्कड़,
हर गीत में जीवन, हर सुर में एक अद्‌भुत रंग।

फर्रुख़ाबाद की ठुमरी, मन मोहे,
आल्हा के सुर, वीर गाथा बोले।
बुंदेलखंड की धरती, दमदार बोलों की,
मैथिली की मिठास, दिलों को छू लेती।

हर भाषा, हर बोल, एक अलग पहचान,
उत्तर प्रदेश भारत का महान
कविताओं का खजाना कला का नगर
तेरी मिट्‌टी में उगे संगीत नैन सागर

लोक गीत के सरस गान।
रहा अमर उत्तर प्रदेश पान।

•

पता : 197 कुबेरपुर, कायमगंज,
फर्रुखाबाद (उ.प्र.)—209502
मो. : 9044441004

विभा कनन की एक कविता

विभा कनन

मेरी माँ की ममता

मुख की सुन्दरता
दर्शाए मोहकता
नूतनता
मेरी माँ की ममता।

मन की चंचलता
बतलाए निर्मलता
निश्छलता;
मेरी माँ की ममता।

समझने की सुगमता
समझाए तन्मयता
कार्य कुशलता
मेरी माँ की ममता।

वाणी की मधुरता
पढ़ाए नैतिकता
मानवता
मेरी माँ की ममता।

•

पता : नं. 26, कृष्ण राघवन नगर, बोडिपलायम मदुकरई,
कोयम्बटूर, तमिलनाडु–641105
मो. : 9621400533

धर्मेन्द्र गुप्त साहिल की कविताएँ

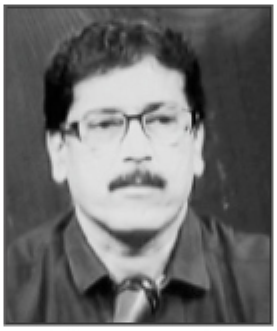

धर्मेन्द्र गुप्त साहिल

फिर भी

रूप में सौंदर्य नहीं
गंध में सुगंध नहीं
रस भी
नीरस से हो गए हैं
फिर भी
सहृदय बना हुआ है
जीवन।

सादगी और रंग

मैं मर मिटा
उसकी सादगी पर
वह फिदा हो गई
मेरे रूप पर
बनी हुई है
उसकी सादगी
अब भी
मिट रहा है मेरा रूप
मैं आज भी उसे
पहले की तरह चाहता हूँ
वह रहती है
कुछ खिंची–खिंची मुझसे
अब।

एंज्वाय

'तुम मेरी हो
मैं तुम्हारा हूं'
बेमानी से हो गए हैं
इस तरह के संवाद
'तुम जीवन भर मेरा साथ दोगी
मैं ज़िंदगी भर तुम्हें सुख से रखूंगा'
बेमानी हो गई है
ये बातें भी
सार्थक है
अब यह कहना
'आओ एंज्वाय करें ज़िंदगी
जब तक संभव हो'।

दोस्ती या सियासत !

छोड़ देते हो तुम
कितनी ही बातों को
अधूरी
और मेरी धड़कनें बढ़ा देते हो
टाल देते हो
कितने ही सवालों को मेरे
और जगा देते हो
मेरे ज़ेहन में कुछ और
सवाल
सच कहना
ये दोस्ती है या सियासत !

•

पता : के 3/10 ए, मां शीतला भवन,
गायघाट, वाराणसी–221001
मो. : 8935065229

महेश कुमार केशरी की कविता

महेश कुमार केशरी

घर पर सब कैसे हैं !

मैं दिल्ली जैसे महानगर
में जाना चाहता हूँ।
और भी
बहुत सारे महानगरों में
मुंबई नहीं बंबई तब का बंबई
कोलकाता नहीं कलकत्ता पुराना कलकत्ता
चेन्नई नहीं मद्रास पुराना वाला मद्रास
और मिलना चाहता हूँ
अपने ही तरह के सीधे–साधे
मनई से जो निपट देहाती हो
जो, किसी अजनबी को
भी देखते ही गर्म जोशी से मिले...

झपट कर छीन ले झोला,
बैग या थैला ..
बड़े अधिकार से
और बिना औपचारिकता के
पकड़ ले हाथ और खींच कर
ले जाये रिक्शे तक कि ये
हमारे शहर में पहली बार आएँ
हैं...मेहमान हैं हमारे !
इन्हें मेरे घर पर ले चलो

खबरदार किराया इनसे मत लेना
मैं दे रहा हूँ...
जिसे पता हो बड़े शहर की
तकलीफें, फाकाँकशी के दिन...
सर्दियों में फुटपाथ पर की ठंड
गर्मियों की तपती हुई सड़क
एक कुरता, एक लुँगी...
एक हवाई चप्पल, एक गमछा...
एक बीड़ी का बंडल जब
बात का छोर टूटने लगे तो
वो लाल चाय बनाने में जुट जाये
अपने धुँआए स्टोव पर सस्पेन में
एक बीड़ी जलाकर सामने से दे
और पूछे एक सवाल कि घर
में सब कैसे हैं...
इधर शहर कैसे आना हुआ...
अच्छा अम्मा बीमार हैं कोई बात नहीं
तुम जितने दिन चाहो यहाँ रह सकते हो
आराम से इलाज करवाओ
खाने–पीने की भी चिंता मत करो
मेरे पास जो थोड़े बहुत पैसे हैं
उनसे काम चलाओ...
घर पर खत मत लिखना
नहीं फोन भी नहीं करना है
सब लोग परेशान हो जायेंगे
क्या जॉब के सिलसिले में आये हो
ये भी अच्छा रहा हमारे गाँव का कोई
लड़का अफसर बना है
और वो तुम हो इससे बड़ी बात और
खुशी मेरे लिए
भला और क्या होगी
चलो, मैं अफसर ना बन सका
अपना ही कोई भाई बना है
समझो मैं ही आज अफसर बन गया...!
मेरी चिर–संचित अभिलाषा आज पूरी हो गई
कल ही जाकर देवी स्थान में बताशा चढ़ाऊँगा
मैं भी, समस्तीपुर से नौकरी की तलाश में
यहाँ आया था
नौकरी तो ना मिली बेलदारी का काम करने
लगा...
खैर य मैं बहुत खुश हूँ
वो, इस बात की भनक भी ना लगने दे
कि कितने दिन वो जब शहर में नया–नया
आया था
तो महीनों भूखा सोया,
बाहरी भीतरी, लोकल और बाहर वाले की बीच
की खाई को पाटते–पाटते कितनी लाठियाँ खाईं
आज भी पीठ पर नीले निशान हैं
पर फिर भी टिका रहा, दिल्ली, बंबई, कलकत्ता
और मद्रास में
गँवई आदमी छुपा जाए अपनी मुस्कुराहट में
अपने शहर
में रहने की दास्तान !

•

पता : C/O–मेघदूत मार्केट फुसरो, बोकारो,
झारखंड–पिन 829144
मो. :

नरेन्द्र सिंह की तीन कविताएँ

नरेन्द्र सिंह

1. ज़िन्दगी है इक दिया

ज़िन्दगी है इक दिया, तो हैं हमारी साँस बाती।
स्वस्थ रहकर ही चलेगा, श्वांस का व्यापार साथी।
जब सुबह बिस्तर को छोड़े,
न लें हम अंगड़ाइयां।
सैर पर निकलें सुनें हम,
शबनमी शहनाइयां।
योग अपनाएं, मिलें तब ज़िंदगानी मुस्कुराती।
जिन्दगी है इक दिया, तो हैं हमारी सांस बाती।
पोषक तत्व हैं ज़रूरी,
शुद्ध भोजन शुद्ध पानी।
मौसम सभी लेकर के आते,
मीठे फल, सब्जियां सुहानी।
स्वच्छता के हों दीवाने, नींद हमको थक सुलाती।
जिन्दगी है एक.....
शुभ विचारित कर्म अपना,
हर परीक्षा पास होता।
श्रम–परिश्रम औ लगन से
मन में नवल विश्वास होता।
जीत लेंगे कंटकों को, मंजिल हमको है बुलाती।
ज़िन्दगी है इक......
हम बड़ों को मान दें तो,
खोल दें अनुभव–पिटारे।
देख लो संग बैठकर,
बीते हुए अनुपम नज़ारे।

मुश्किल भरे दौर में, लौ नहीं है डगमगाती।
ज़िन्दगी है इक दिया, तो हमारी सांस बाती।।

2. प्रेम–गीत

एक अजनबी को देखा जो मैंने,
दिल ने कहा बिल्कुल यही है।
जिसे ढूंढती थी नजरें हमारी,
ये हू–बहू वही है वही है।
नैना मिलाके पूछा ये हमने,
कहां थे मुसाफिर अब तक बताओ ?
वो मुस्कुरा के हौले से बोला,
तुम्हें ढूंढते थे नज़र न हटाओ।
इसी राह पर हम अक्सर भटकते,
मगर दिल ये कहता कोई नहीं है।
एक अजनबी को देखा जो मैंने
दिल ने कहा बिलकुल यही है।
मिलकर के तुमको लगता है ऐसा,
मुझे मेरी मंजिल खुद से मिली है।
पहलू में बैठो, बातें करो कुछ,
मुहब्बत की कितनी कलियां खिली हैं
मिलकर कहें हम मिलते रहें हम,
तुम भी सही हो, हम भी सही हैं।
एक अजनबी को देखा जो मैंने,
दिल ने कहा बिल्कुल यही है,यही है।

3. नाना जी !

फूलों वाला कलियों वाला,
और मटर की फलियों वाला।
मीठे गन्ने, लाल चुकन्दर,
बाग–बगीचे जिसके अन्दर।
देश हमें दे जाना जी,
ओ! भारत के नाना जी।
पर्वत घाटी मैदानों में,
खेत, खलिहान, खदानों में।
झरते झरने बहती नदियां,
हर्षित पुलकित गांव औ गलियां।
सबका ठौर ठिकाना जी।
ओ! भारत के नाना जी।
हम सबके हैं सभी हमारे,
नील गगन के चांद सितारे।
प्यार भरी बातों की सरगम,
खुशियां पाकर चहके हरदम।
हर कोई रहे दीवाना जी,
ओ! भारत के नाना जी।
स्वच्छ हवा और शुद्ध पानी,
हरियाली संग फसलें धानी।
चांद के भीतर चरखा–दादी,
बर्फ घिरी हर चोटी–वादी।
देना सभी खजाना जी,
ओ ! भारत के नाना जी।।

•

पता : ए–67 / बी, दुर्गा विहार, देवली गांव,
नई दिल्ली–1100080
मो. : 9873299789

रेखा शाह की कविता

रेखा शाह

यात्राएं

मनुष्य के जीवन में
यात्राएं रहनी चाहिए,
एक हृदय से
दूसरे हृदय तक,
दुःखों से सुखों तक
प्रेम का प्रेमियों तक,

सबके जीवन में
होती है यात्रा,
मनुष्य ही नहीं
हर चर–अचर
यात्राएं करते हैं,
यात्राएं नियति, गति प्रगति है,

दिनकर... सुबह से लेकर
रात तक की यात्रा करता है,
निर्झर.. शिखर से
समुद्र में विलीन होने तक,
जीवन.. मृत्यु तक,
और शब्द.. हृदय तक,
निष्ठुरता.. घृणा तक
दया.. करुणा तक,

कोई नहीं बचा है
अपनी यात्राओं से,
सबको यात्राएं मिली है
क्योंकि यह
विवशता और सरसता है,

क्योंकि यात्राएं
देती है ढांढस,
यात्राएं देती है साहस
यात्राएं देती है
एक सुंदर कल,
यात्राएं देती है
हमारे बहुत से
पशोपेश का हल,

पल–पल बदलता दृश्य
अहलादित हमारा मन,
पीछे छूटते दृश्यों की
भावुकता से मुक्त करता है,

निरर्थक नहीं होती है
यात्राएं देती हैं
विस्तार, संसार, सार व्यवहार
पैनी धार,
बहुत जरूरी होती है यात्राएं,

•

पता : बलिया (यूपी),
मो. : 8736863697

डॉ. सुधा मौर्य की कविता

डॉ. सुधा मौर्य

जुस्तजू

अमलतास सी झड़ रही है
मेरी चाहत...
बस इतनी सी जुस्तजू है कि
तेरी चाहत...
सुर्ख गुलमोहर सी हो
जिसके तले जी सके
तेरी मासूम जन्नत...
जन्नत मैं नहीं हूँ
यह पता है...
पर वो जो है खुशनुमा है
जिंदगी है तेरी
तेरी 'मीशा है...
शुक्र है मैं नहीं
तो वो खुदा सा है
अमलतास झड़ भी जाए
पर आबाद रहे तेरा गुलमोहर
जिसके तले पनपे
तेरी मोहब्बत
बेनाम पाक नफासत सी
तेरी मोहब्बत
जो अब बन चुकी
मेरी भी मोहब्बत...

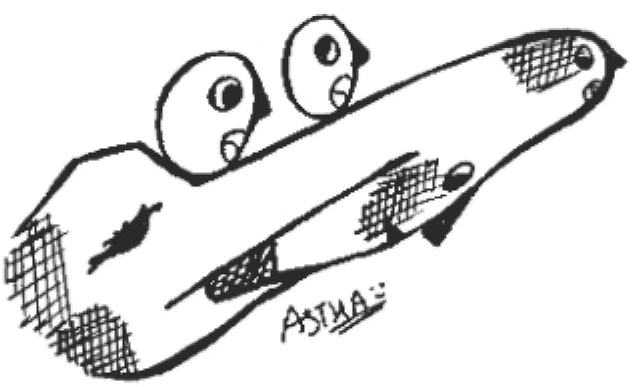

•

पता : सेक्टर 11 बी, 161 वृन्दावन कॉलोनी, लखनऊ–226020
मो. : 9455076255

अलका अस्थाना की दो कविताएं

डॉ. अलका अस्थाना 'अमृतमयी'

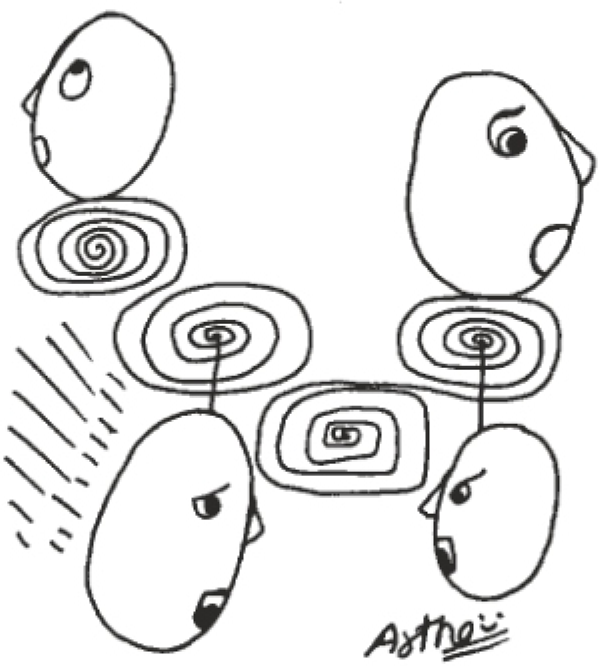

रजनीगंधा

भाग रही ज़िन्दगी
कदम ताल करते कदमों में
निहार रही हूं।
तुम्हारे पद चिह्न
जो बरसों पहले तुमसे मिले थे
मैं मिटाना चाह रही।
तुम्हारा अस्तित्व!
उम्र के दहलीज से,
कितने सावन;
बीत गये मैं यथार्थ
से परिचित हूं।
तुम यथार्थता को पार कर चुके हो,
बड़ी दूरी तक खो गये
मैं चांद की रोशनी में भीग जाती हूं।
पूरी रात रजनीगंधा,
की महक
से मेरे केश
सुगन्धित हो जाते हैं।
जहां तुम्हारे
स्पर्श का अहसास
मुझे पकड़ता
और मैं फिर
स्तब्ध !

स्मृतियों में तुम्हारे

नीली झीनी चादर में
लिपटे हुए मेरे सपने
और मैं पुकारती हूं
तुम्हें।
कभी सुबह की आभा में
कभी पुचकारती गोधूली
बेला में।
नयनों में खोये हुए
हम तुम....
सागर की लहरों से
उमड़ती यौवनावस्था;
की हिलौरे प्रेम के आगोश
में मुझे संभाल रही हूं
मैं कि उसी में
ठहरती जा रही
आलिंगन करती
स्मृतियों में तुम्हारे
कांधे के स्पर्श
करती मेरी जिज्ञासायें
हां तुम ही तो हो न
जो सपनों में हो
भीग गयी ओस की
बूंदों में....
केशों से लिपटकर
धुएं में खो गयी
हूं।
अन्तःस्थल के
अन्तिम द्वार में....

•

पता : 356/24, आलमनगर रोड,
बावली चौकी, लखनऊ
मो. : 8934884441

आलोचना के आलोक में प्रेमचंद

❑ उषा राय

कहते हैं कि 'निंदक नियरे राखिए' पर प्रेमचन्द जैसा विपुल लेखन करने वाला लेखक हो तो आलोचक 'कुटी छवा' कर रहेंगे ही चाहे फूल बरसाएं या पत्थर। वह समय प्रेमचन्द का था। वे जितना ही छपते उतना ही पढ़े जाते। उनके साहित्य में अपार सम्भावनाएं थीं। उनके मूल्यांकन की विविध धाराएं भी दिखाई दे रहीं थीं। ऐसा लग रहा था मानो आलोचना भी अपने मानदण्ड स्थापित कर रही हो। यही कारण है कि आज भी उनके हवाले से यह उठापटक जारी है। इस अंक के मूल में यही विचार है। सम्पादक लिखते हैं– ''जिस व्यक्ति की जन्मस्थली के नाम पर पत्रिका का नाम हो उस व्यक्ति पर एक विशेषांक की उम्मीद तो लमही के पाठक कर ही रहे होंगे।'' पर सवाल ये था कि प्रेमचन्द पर नया क्या ? ऐसा भी नहीं था कि उनके साहित्य और जीवन में नया खोजने को नहीं है। लेकिन समय बहुत बीत चुका है इसलिए सम्पादक ने प्रेमचन्द का मूल्यांकन न करके उनके मूल्यांकन की मूल्यांकन करने की सोची और लमही का यह संयुक्तांक–''आलोचना के आलोक में प्रेमचंद'' नमूदार हुआ। यह अंक लम्बा कालखण्ड समेटे हुए है। यह जितना ही विशद है उतना ही दिलचस्प भी। सबसे ज्यादा लाभकारी उन छात्रों के लिए होगा जो प्रेमचंद को आलोचना के माध्यम से जानना चाहते हैं।

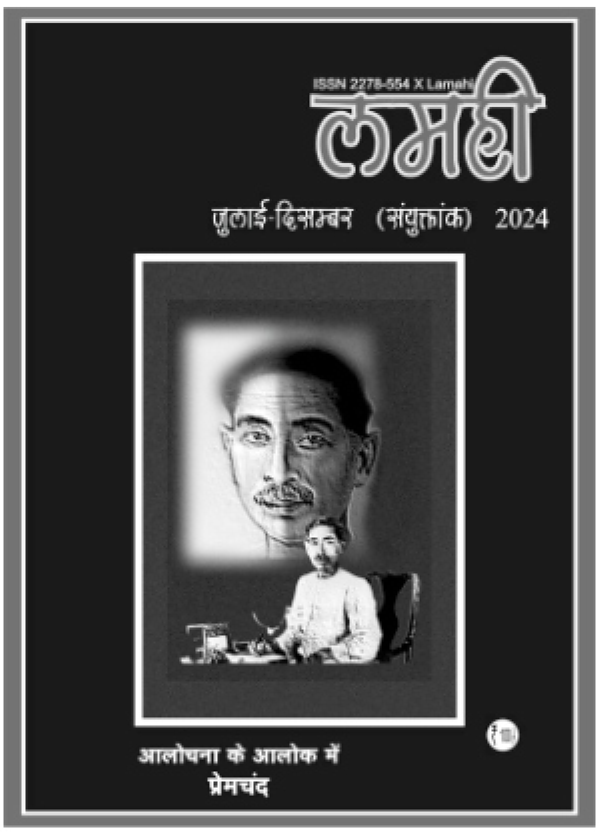

इस अंक में कुल चालीस लेख हैं। चूंकि यह अंक प्रेमचंद के मूल्यांकन के मूल्यांकन का है इसलिए इसमें विभिन्न लेखकों ने लगभग तेइस लेख सुप्रसिद्ध आलोचक, लेखक, सम्पादक और मित्रों पर लिखा है। ये लेख प्रेमचंद के साथ उनके संबंधों पर अथवा प्रेमचन्द विषयक उनकी धारणाओं, विचारों और मूल्यांकन पर है। लगभग सत्रह लेख प्रेमचन्द के जीवन, साहित्य अथवा उनके द्वारा वर्णित समस्याओं पर हैं। कुछ लेख ऐसे हैं जो बताते हैं कि प्रेमचंद पर आलोचना के नाम पर कैसे आघात–प्रत्याघात हो रहे थे, जैसे कि ब्राह्मणों ने लामबंद होकर उन्हें घृणा का प्रचारक कहा। उनके उपन्यासों, कहानियों पर

भी आरोप चल रहे थे। प्रेमचन्द ने यथासंभव जवाब दिया। यदि उन्हें थोड़ी और उम्र मिलती अथवा आत्मकथा लिखते तो शायद सभी आरोपों का खण्डन कर सकते थे। यही कारण है कि अमृत राय को प्रेमचन्द की जीवनी 'कलम का सिपाही' शिद्दत से लिखना पड़ा। इस अंक में निशांत का लेख है– 'अमृत राय और प्रेमचंद : (जीवनी, उपन्यास, आलोचना का संगम कलम का सिपाही)' नाम से जो बेहद मार्मिक बन पड़ा है। इसे पढ़े बगैर प्रेमचंद को जानना नामुमकिन है।

'प्रेमचंद के उपन्यासों की आरम्भिक समीक्षाएं' लेख में सुजीत कुमार सिंह लिखते हैं– ''हिंदी साहित्य के भलेमानस समालोचकों को उपन्यास के नाम से चिढ़ है।'' वे इन समालोचकों के नाम भी देते हैं– पं. ज्वालादत्त शर्मा, पं. विश्वम्भर नाथ शर्मा, कालिदास कपूर, रघुपति सहाय, रामदास गौड़, नरोत्तमव्यास, श्रीवास्तव, रामचन्द्र टंडन, श्री राम शर्मा, जैनेंद्र कुमार इत्यादि। अवध उपाध्याय, हेमचंद्र जोशी, इलाचंद्र जोशी, श्रीनाथ सिंह तो प्रेमचन्द के घोर निंदक थे। अपने लेख ''आखिरकार प्रेमचंद सरस्वती के आरोपों से बेदाग निकल गए" में डा. मुश्ताक अली ने प्रेमचंद के उपन्यासों पर हुए हमलों के बारे में विस्तार से लिखा है। कुछ लोग मनमाना लिखते थे लेकिन कई पत्र–पत्रिकाओं में सोद्देश्य प्रेमचंद के खिलाफ़ लेख छपते थे। प्रेमचंद अपने मित्र सेहर हथगामी को लिखे में पत्र में रंगभूमि पर वैनिटी फेयर और प्रेमाश्रम पर रिजैक्शन के आरोप को हद दर्जे की बेवकूफी बताते हैं। उन्होंने सभी सवालों का सामना किया कभी घुटने नहीं टेके। यही बात है कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को प्रेमचंद का अपनी हालत पर तरस न खाना, वर्तमान के प्रति संबद्ध रहना, परेशानी और कठिनाई में अपनी समस्या का रोना न रोना उन्हें उनका मुरीद बनाता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी उन्हें भारत का पथ–प्रदर्शक ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक पथ–प्रदर्शक कहते हैं। लेकिन आचार्य रामचंद्र शुक्ल प्रेमचंद को सर्वश्रेष्ठ कथाकार मानने के बावजूद चलताऊ कथन कहकर आगे बढ़ जाते हैं। ये बातें तरुण गुप्ता अपने लेख–'आचार्य रामचंद्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि में प्रेमचंद' में विस्तार से कहते हैं। मंगलमूर्ति अपने लेख 'शिवपूजन सहाय और प्रेमचंद' में समानता की बातें करते हुए एक मजेदार बात कहते हैं– सौ में से नब्बे पंचानबे उर्दू फारसी पढ़ने वाले थे। इसीलिए क्लास के कमरे में मौलवी साहब के आते ही दो चार हिंदी छात्र पंडित जी के पास चले जाते थे। पंडित जी वहीं बरामदे के कोने या किसी छोटे कमरे में अकेले बैठकर रह कर पढ़ाया करते थे। मौलवी साहब प्रायः कहा करते थे कि जो ठेठ, देहाती, गंवार और उजबक होते हैं वे ही हिंदी पढ़ते हैं। वस्तुतः दोनों ही लेखकों की कथाभाषा उर्दू से हिंदी में परिवर्तित हुई।

डा. प्रदीप जैन ने 'मुंशी दयानारायण निगम और प्रेमचंद' लेख में 'जमाना' के सम्पादक के तौर पर दयानारायण निगम और प्रेमचंद की कथायात्रा के बारे में लिखा है। भारत भारद्वाज का लेख 'जनार्दन प्रसाद झा द्विज और प्रेमचंद' पर है। श्याम बिहारी श्यामल का उपन्यास अंश है उनका लेख 'जयशंकर प्रसाद और प्रेमचंद 'कथा' में पात्र, ढले कथा–दृश्यों में चलते–फिरते, बोलते–बतियाते प्रेमचंद)। ज्योतिष जोशी का लेख जैनेंद्र और प्रेमचंद के आत्मीय संबंधों पर केन्द्रित है– 'जैनेंद्र कुमार और प्रेमचंद (एक नास्तिक शक्ति का अंतरंग)। इस लेख में प्रेमचंद की निश्छलता, कोमलता, करुणा विचलित स्वभाव और सीमित आर्थिक स्थिति का पता चलता है, और यह भी कि वे कितनी बार धोखे के शिकार हुए। चित्तरंजन मिश्र ने फिराक गोरखपुरी और प्रेमचंद की निकटता और आत्मीयता को लेकर लेख लिखा है– 'प्रेमचंद फिराक के हवाले से जिसमें फिराक़ प्रेमचंद को उर्दू का एक बड़ा लेखक मानते थे। योगेश प्रताप शेखर का लेख है– 'नलिन विलोचन शर्मा और प्रेमचंद' जिसमें नलिन विलोचन का कहना है कि– ''प्रेमचंद ने उपन्यास या कहानी के माध्यम से वह किया जो महात्मा गांधी अपने आंदोलनों से करते थे।'' दिनेश कुमार का लेख है– 'डा. राम विलास शर्मा और प्रेमचंद (प्रगतिशील साहित्य के निकष प्रेमचंद)' इसमें प्रेमचंद के वैचारिकी की पड़ताल की गई है। कहते हैं कि राम विलास शर्मा ने प्रेमचंद को गांधीवादी दायरे से बाहर निकाला। विजय बहादुर सिंह ने 'नंद दुलारे वाजपेई और प्रेमचंद' लेख लिखा है। इसमें वे लिखते हैं कि आलोचक नंद दुलारे वाजपेई प्रेमचंद की महानता को नहीं समझ पाए और उनके घनघोर साहित्यिक शत्रु बन बैठे। इस लेख में साहित्यिक उठापटक की अन्य बातें भी आईं हैं। प्रेमचंद और राधाकृष्ण के प्रगाढ़ संबंधों कोलेकर लेख लिखा है संजय कृष्ण ने राधाकृष्ण और प्रेमचंद'। प्रेमचंद के निधन के बाद हंस पत्रिका का कार्य भार राधाकृष्ण को सौंपा गया था।

'नामवर सिंह की प्रेमचंद विषयक धारणा' यह लेख है

राहुल सिंह का। नामवर सिंह प्रेमचंद के अध्ययन चिंतन में चार पहलुओं को लक्ष्य करते हैं। प्रगतिशीलता के तत्वों की पहचान, साम्राज्य विरोधी चेतना, औपनिवेशिक चेतना से मुक्ति का प्रयास और सामंतवाद विरोधी स्वर। तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा भी नामवर सिंह ने प्रेमचंद का विशद अध्ययन किया। रविरंजन का लेख है– 'मुक्तिबोध हरिशंकर परसाई और प्रेमचंद'। यह सुन्दर और मार्मिक लेख है। विभास वर्मा ने 'राजेंद्र यादव की निगाह में प्रेमचंद' लिखा है, राजेंद्र यादव अपने लेखन में श्रद्धा भाव से परहेज रखते हैं। वे प्रेमचंद का विश्लेषण कथाकार के तौर पर करते हैं लेकिन 'हंस' का मिलना उनके लिए बड़ी बात थी। डा. रेणु व्यास ने 'प्रो. नवल किशोर का प्रेमचंद विमर्श' लेख लिखा जिसमें आलोचना के मानदण्डों पर बातें रखी गई हैं। 'वीर भारत तलवार की प्रेमचंद संबंधी आलोचना' डा. अमिष वर्मा ने लिखा है। उनका कहना है कि वीर भारत तलवार की आलोचना प्रेमचंद के साहित्य को समझने की नई दृष्टि प्रदान करती है।

'बिट्विन टू वर्लडस : एन इन्टेलेक्चुवल बायोग्राफी आफ प्रेमचंद गीतांजलि पाण्डेय' ये लेख लिखा है अंबरीष त्रिपाठी ने। यह गीतांजलि पाण्डेय (श्री) की थीसिस रही है। गीतांजलि श्री ने बौद्धिक इतिहास का सवाल उठाया जो बहुत हद तक राष्ट्रीय एवं विभिन्न आंदोलनों तथा बढ़ती सांप्रदायिकता के कारण प्रभावित रहा। लेखिका ने प्रेमचंद के साहित्यिक प्रतिमानों, रचनात्मक मूल्यों एवं दृष्टिकोणों को उनके सामाजिक संबंधों से निर्मित संवादों, सहमतियों एवं अंतर्विरोधों के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

अब हम चलते हैं आरोपों, विवादों, सच्चाइयों और निराकरणों की ओर डा. सुरेश कुमार के लेख– डा. धर्मवीर और प्रेमचंद के हवाले से। यह लेख इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि डा. धर्मवीर ने अपनी किताब 'कबीर के आलोचक' में सवर्ण आचार्यों की बौद्धिकता और अकादमिक समझ पर सवाल उठाया तथा 'प्रेमचंद : सामंत का मुंशी में प्रेमचंद पर उनके दलित विमर्श को लेकर गहरे आरोप लगाए। 'रंगभूमि' उपन्यास की प्रतियां जलाई गईं एवं कफन कहानी पर सवाल उठाए गए। अरुण होता ने हिंदी आलोचना के मौजूदा परिदृश्य को दिखाते हुए 'वीरेंद्र यादव की प्रेमचंद केंद्रित आलोचना दृष्टि' पर लेख लिखा है। प्रेमचंद पर हमला करने वाले लगभग सभी आलोचक, लेखकों की बातों का जवाब वीरेंद्र यादव ने दिया है। डा. धर्मवीर के बारे में वे कहते हैं– ''निस्संदेह डा. धर्मवीर कुतर्क और मिथ्या कथन के बेताज बादशाह हैं।'' आलोचना में छपे उनके लेख का शीर्षक है– ''कफन को यहां से पढ़ें'', वीरेंद्र यादव कफन को हिंदी की एक महत्वपूर्ण कहानी मानते हैं।

'कांतिमोहन और प्रेमचंद : संदर्भ प्रेमचंद और अछूत समस्या' पर लेख है सत्येंद्र प्रताप सिंह का, जिसमें प्रेमचंद के अछूत समस्या सम्बंधी विचार हैं। अंकित नरवाल का लेख है 'मदन गोपाल और प्रेमचंद' जिसमें मदन गोपाल द्वारा लिखी प्रेमचंद की जीवनी 'कलम का मजदूर का जिक्र है। मदन गोपाल को यह जीवनी लिखने में बीस वर्ष लगे। उन्होंने प्रेमचन्द द्वारा लिखी चिट्ठी पत्रियों को प्रमाण के रुप में रखा। अरुण होता ने फकीर मोहन सेनापति और प्रेमचंद के जीवन और साहित्य में समानता दिखाते हुए लेख लिखा है– 'फकीर मोहन सेनापति एवं प्रेमचंद यथार्थ के आइने में'। प्रदीप पंत ने कमल किशोर गोयनका पर लिखा है– 'कमल किशोर गोयनका : मत भिन्नता के बावजूद' इस लेख में वामपंथ और दक्षिणपंथ के बीच से निकलता लोकतांत्रिक स्पेस किसी भी अराजकता पर भारी है। मधुर नागवान का लेख डा. प्रदीप जैन पर है– 'प्रेमचंद साहित्य पर डा. प्रदीप जैन का अनुसंधान और शोधकार्य।'

अब बात करते हैं कविता के लेख– 'प्रेमचंद घर में : वे देवता नहीं थे' के बारे में। यह सुखद है। इसी बहाने प्रेमचंद की पत्नी शिवरानी देवी को थोड़ा सा जानने का मौका मिलता है जो बेहतर और जुझारु कहानीकार थीं। लेकिन वे इस आरोप से कभी उबर नहीं सकी कि उनकी कहानियां प्रेमचंद लिखते हैं। उन्होंने प्रेमचंद पर संस्मरण लिखना जरुरी समझा बनिस्बत अपनी कहानियों के। यह पितृसत्ता है जिसके खिलाफ प्रेमचंद भी लड़ते रहे, लेकिन वे देवता नहीं थे उनमें कमजोरियां थीं। इस कड़ी में गरिमा श्रीवास्तव का लेख है– 'स्त्री छवि : प्रेमचंद की कहानियों के विशेष संदर्भ में राष्ट्रीयता और सुधारवाद के दोराहे पर खड़े भारतीयों के बीच प्रेमचंद अपनी कहानियों में स्त्री की नई छवि लेकर आए। प्रेमचंद स्त्री जीवन की समस्याओं, नैतिकता, शुचिता और यौनिकता पर भी बात करते हैं। वैसे उनके भीतर भी एक सुधारक रहता था जो कभी–कभी पितृसत्ता के मूल्यों को बचाने पर तत्पर रहता। इसी के साथ वैभव सिंह का लेख है– 'हिंदी उपन्यास विधवा विवाह प्रसंग'। इस लेख में वैभव सिंह ने स्वतंत्रता से पूर्व पूरे भारत में विधवाओं की स्थिति और लेखन की पड़ताल की है। प्रेमचंद ने इस समस्या को न

सिर्फ अपने उपन्यास और कहानियों में उठाया बल्कि धर्म का भंडाफोड़ करते हुए कई मंदिरों को दुराचार का अड्डा तक बताया।

जहां तक प्रेमचंद की वैचारिकी का सवाल है कंवल भारती ने बड़ा और महत्वपूर्ण लेख लिखा है– 'प्रेमचंद एक विचारक के रूप में' कंवल भारती का कहना है कि प्रेमचंद कथा सम्राट के साथ–साथ एक पत्रकार भी थे। उनका पत्रकार होना, समय–समय पर लेख लिखना उन्हें एक विचारक के रूप में प्रतिष्ठित करता है। प्रेमचद की सोच और विचारधारा को जानने के लिए कंवल भारती ने अपने लेख में कुछ बिन्दु रखे हैं जैसे– ईसाई बनाम हिंदू सभ्यता, गांधी पूना पैक्ट और दलित प्रश्न, आरक्षण और सांप्रदायिकता, स्वराज्य और समाजवाद, पूंजीवाद और राष्ट्रवाद, हिंदू मुस्लिम एकता, गांधी अछूतोद्धार और हिंदू। कंवल भारती के लेख सदा ही चिंतनशील, तार्किक और उत्तेजक होते है।

प्रेमचंद का बहुआयामी व्यक्तित्व था। उन्होंने बम्बई फिल्म जगत की ओर भी रुख तो किया लेकिन भयंकर मोहभंग के चलते वापस आ गए। इसके बारे में बात करते हैं सव्यसाची भट्टाचार्य अपने लेख– 'फिल्म उद्योग में प्रेमचंद' में।

डा. शुभम मोंगा का लेख है– 'प्रेमचंद : समय के इस और उस पार' इस लेख में उन्होंने मुरली मनोहर और रेखा अवस्थी द्वारा सम्पादित कृति– :प्रेमचंद : विगत महत्ता और वर्तमान अर्थवत्ता' के लेखों का उल्लेख करते हुए प्रेमचंद की वैचारिकता और महत्व पर अपनी बात रखी है। 'प्रेमचंद की साहित्य दृष्टि : उपन्यास और उसकी रचना प्रक्रिया' यह लेख है श्री नारायण पाण्डेय का, उनका कहना है कि प्रेमचंद का हाथ जमाने की नब्ज पर था। उन्होंने प्रेमचंद के उपन्यासों के आन्तरिक तत्व और रचना प्रक्रिया पर अपनी बात रखी है। शशिभूषण मिश्र अपने लेख– 'आलोचना के कटघरे में प्रेमचंद' लेख में तमाम हमलों का जायजा लेते हैं और प्रेमचंद के महत्व को स्थापित करते हैं।

'उर्दू अदब में प्रेमचंद के लेखन का महत्व' यह लेख है प्रो. सगीर अफराहीम और डा. अहमद रजा का उन्होंने प्रेमचंद को युग प्रवर्तक व्यक्तित्व कहकर उर्दू अदब में उनके महत्व को स्वीकार किया है। गोपाल प्रधान का लेख है– 'प्रेमचंद के समय से संवाद' इसमें गोपाल प्रधान ने प्रेमचंद का समय उनकी उन्नत समझ, उनके संघर्ष और उन पर लगे आरोपों के इर्द–गिर्द अपनी बात रखी है। प्रेमचंद की यह बात कहना वे नहीं भूलते कि– 'मैं अपने प्लॉट जीवन से लेता हूं पुस्तकों से नहीं।' 'प्रेमचंद तनकीद उर्दू में यह लेख है जानकी प्रसाद शर्मा का जो स्वयं एक अच्छे अनुवादक हैं। उन्होंने इस लेख में प्रेमचंद पर तरक्कीपसंद उर्दू आलोचना के बारे में लिखा है। हरीश त्रिवेदी का यह लेख अंग्रेजी अनुवाद का जायजा लेता है– 'अंग्रेजी में प्रेमचंद रू अनुवाद दर अनुवाद' इसमें उन्होंने प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों के अनुवाद के बारे में लिखा है। उनका कहना है कि अन्य भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद हुए हैं। हरीश त्रिवेदी और जानकी प्रसाद शर्मा के अनुवादों के कारण प्रेमचंद को हजारों–हजार पाठक मिले।

कहते हैं कि ग्रंथ वह होता है जो ग्रन्थि अर्थात् गांठ खोले इसी प्रकार आलोचना भी वह होती है जो बंदिशों को तोड़ती है और बंधी बंधाई धारणाओं से मुक्ति दिलाती है। गीतांजलि श्री अपनी थीसिस में इसी अफसोस को उठाती हैं कि यदि बौद्धिकता का इतिहास लिखा गया होता तो स्त्री समस्याओं पर भी विचार साफ, स्पष्ट और पुष्ट होकर आते। इसकी समीक्षा लिखते हुए मेरे मन में भी कुछ सवाल उठ रहे थे। पहली बात स्त्री संदर्भों में रोहिणी अग्रवाल का कोई लेख क्यों नहीं है ? जबकि प्रेमचंद पर उनके कई लेख उपलब्ध हैं। दूसरी बात, बातचीत के दौरान अब्दुल बिस्मिल्लाह ने मुझे बताया था कि कफन कहानी मुख्य रुप से उर्दू में लिखी गई। उर्दू पत्रिका 'रिसाला जामिया' के दिसम्बर 1935 के अंक में यह कहानी छपी थी। इसका हिन्दी रूप बाद में अप्रैल 1936 में इलाहाबाद से निकलने वाली पत्रिका 'चांद' में छपी। इस प्रकार शब्दों का हेर–फेर संभव है इसके आधार पर लेखक पर सवाल खड़ा नहीं किया जा सकता है।

हरीश त्रिवेदी का लेख अनुवाद की दुनिया में नये रास्ते खोलता है जो मूल्यांकन को और चमकदार बनाता है। इसी से यह बात निकल कर आई कि अन्य भारतीय भाषाओं में प्रेमचंद का मूल्यांकन किस तरह से हुआ है और कितना ? सम्पादक का कहना है कि इन सारी बातों को समेटते हुए इसे पुस्तकाकार रुप में लाने की योजना पर विचार किया जा रहा है। इस प्रकार तमाम सवाल–जवाब, आरोप–प्रत्यारोप से गुजरता हुआ उपन्यास सम्राट प्रेमचंद पर ताजातरीन आलोचना का यह संयुक्तांक अनूठा बन पड़ा है। •

पता : 65, आवास विकास कॉलोनी, मॉल एवेन्यू,
लखनऊ–226001
मो. : 7897484896

जीवन के इंद्रधनुषी रंग छलकाती अद्भुत कहानियाँ

❑ भगवती प्रसाद गौतम

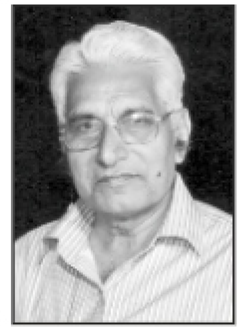

नदी जैसे जलस्रोत की गतिशील धार होती है, वैसे ही कहानी साहित्य की प्रवाहमान विधा है। विश्वकवि टैगोर की इस उक्ति के परिप्रेक्ष्य में देखें तो कहानी मानवीय जीवन की वह तस्वीर है जिसकी कोई सीमा रेखा न होकर भी वह आत्मिक मर्यादा से बंधी होती है। वह निश्चित ध्येय के साथ लिखा गया ऐसा आख्यान है जिसे बाबू गुलाब राय 'एक पूर्ण रचना' मानते हैं।

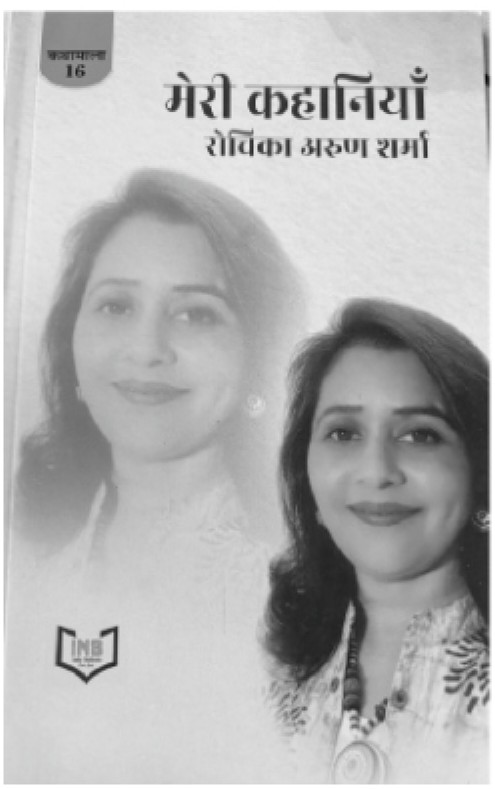

मेरे सामने है एक अनूठा कथा–संग्रह 'मेरी कहानियाँ', जिसकी प्रणेता है बड़ी ही ऊर्जावान सृजनहार रोचिका अरुण शर्मा। 'इंडिया नेटबुक्स' की अपनी 'कथामाला' श्रृंखला में चुनिंदा कहानीकारों की चुनिंदा कथाओं को स्वयं कथाकार द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इससे उनका अपनी कहानियों से आत्मिक जुड़ाव बरबस ज़ाहिर हो उठता है। तीन–तीन प्रौढ़ कहानी और बालकथा संग्रहों की रचयिता रोचिका शर्मा की यह सातवीं कृति है, जिसमें जीवन से जुड़े इंद्रधनुषी रंगों से सराबोर पंद्रह कहानियाँ बड़े ही मन और जतन से सँजोई गई हैं। वैसे अपनी बात 'मन की चिटचिटाती फुलझड़ियाँ' के जरिए वे कहती हैं, "...यह कार्य मेरे लिए अत्यंत मुश्किल था क्योंकि मुझे तो अपनी सभी कहानियाँ ऐसे लगती हैं जैसे मेरी बेटी के विभिन्न रूप।" (पृ. 9)

पुस्तक से गुजरते हुए अनायास ही नजर ठहरती है एक स्थल पर, शीर्षक 'मुस्कुराती साँझ'। एक ऐसी कहानी जहाँ लगता है, शहर की कॉलोनी बुजुर्गों, युवाओं, बच्चों, महिलाओं...यानी चार वर्गों में बंट गई है। पर इसमें भी बुजुर्गों का 'लाफ्टर क्लब', जिसका नाम है 'मुस्कुराती साँझ', सबसे अधिक भाग्यशाली प्रतीत होता है। उसी में एक नए जोड़े का आगमन होता है, रामनाथ जी और पत्नी लीला देवी के रूप में। ऐसे बुजुर्ग जिनके बेटे–बहू विदेश जाने का सपना संजोते हुए उन्हें वृद्धाश्रम पहुंचाने की योजना बना रहे हैं। उधर एक विधुर हैं भल्ला साहब और दूसरे पेंशनर वसीम भाई। उनके भी अपने–अपने दुःख दर्द हैं। आख़िर बुजुर्ग मंडली का 'कुछ नया करने का विचार' रंग लाता है और उस 'मुस्कुराती साँझ भवन' का उद्‌घाटन होता है जहाँ सभी वर्गों के हौसले नई उड़ान भरने लगते हैं।

ऐसी ही एक रचना है 'मन केसरिया रंग दो जी' देश प्रेम के ज़ज्बे से सराबोर कहानी। यहाँ नौ वर्षीय बिटिया हाँफती–घबराती घर में घुसते हुए गीतिका को ख़बर देती है– "...सैनिकों पर अटैक हुआ है पुलवामा में... पर मम्मी हमारे संजू भैया?" याद आता है कि संजू के पिता श्रीनगर में आतंकवादियों से मुठभेड़ में शहीद हुए थे। फिर भी वीरांगना कविता का स्वर व जोश मंद नहीं पड़ा है, एकदम निर्भीक, "जब अपना बेटा देश के नाम कर ही दिया है तो अब डर कैसा, गीतिका? उसके पिता भी तो यही चाहते थे।' (पृ. 79)

इसी बीच कविता और सुशील के 'चट मंगनी पट ब्याह' का गुजरा संदर्भ भी कथानक में अलग ही रंग घोल देता है। साथ ही भाषिक शिल्प भी मन में जुंबिश पैदा करता चलता है। बतौर बानगी कुछ खास पंक्तियाँ– "पतझड़ में मुरझाई बेल–सी कविता की उदास सूरत देख सुशील ने अफसरों से उसे साथ ले जाने की अनुमति ले ली। कविता ऐसे मुस्कराई मानो समंदर से बाहर साहिल पर तड़पती मछली को आती हुई लहरें अपने साथ बहा ले गई हों और उसने गहरी सांस ली हो।" (पृ. 80) ...बस, कहानी आगे बढ़ती चली जाती है।

रोचिका का पहला कहानी संग्रह रहा 'जो रंग दे वो रंगरेज'। उसी की शीर्ष कहानी 'जो रंग दे वो रंगरेज' भी इस कृति में शामिल है। एक ऐसी रचना जो 'शायद मेरी किस्मत में किसी का प्यार है ही नहीं ...' से आरंभ होकर '...तुम हो मेरा प्रेम विनय, तुम...जिसने मेरे जीवन को रंग दिया....तुम हो मेरा प्यार, मेरे रंगरेज।' जैसे सुखद मोड़ पर आकर समाप्त हो जाती है। इसी पुस्तक में समाविष्ट 'बट ज्वाइंट', 'दिन–दिन बढ़ती काली घास', 'वी आर इडिएट्स', 'उड़ते हुए फुस्स पटाखे' जैसी और भी कहानियाँ हैं जों कथावस्तु, पात्र चित्रण, देशकाल–परिवेश के बूते बरबस ध्यान आकृष्ट कर जाती हैं। लेकिन एक कहानी है 'वे नौ माह' जों संवेदनामूलक होने के साथ–साथ सामाजिक विसंगतियों, विकृतियों को रेखांकित करती हुई पाठक के दिल में उतरती जाती है। इसमें नवें फ्लोर पर रहने वाली रोहन की 'प्रेग्नेंट' मम्मी यानी ईशा के बेरुखे, बेमुरव्वती पति द्वारा फोन पर एक लाख रुपए उधार मांगने जैसे घटनाक्रम के बाद यह पता चलना कि उस परिवार के लोग सेक्स रैकेट से जुड़े हैं, विचलित कर देते हैं। मगर अंततः निष्कर्ष यह कि "मैं अपने पति की समझदारी पर नाज और अपने आपको बाल–बाल बचा महसूस कर रही थी।' जैसे एहसास के साथ ही कहानी पर विराम लग जाता है।

सच यह है कि शब्द–शिल्पी रोचिका अरुण शर्मा इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग और सॉफ्टवेयर प्रोग्रामिंग से जुड़ी होकर भी हिंदी साहित्य की दुनिया में साधकार हस्तक्षेप करती हैं। जहां उनके कथानकों में सहज प्रवाह व्याप्त रहता है, पात्रों के व्यवहार में सामाजिक सरोकारों का यथेष्ट 'पुट' अनुभव होता है, भाषा में अकल्पनीय लावण्य के दर्शन हो आते हैं, वहीं कहानी की आत्मा से साक्षात्कार कराने वाले संवाद भी बरबस बड़े सरस और संप्रेषणीय बन पड़े हैं। उदाहरणार्थ, 'मुस्कुराती साँझ' में जब एक हताश बुजुर्ग दूसरे से अपनी पीड़ा यों साझा करता है, "वक्त रहते सोचा होता तो शायद ये बुरे दिन न देखने पड़ते। कल रात बेगम तकिये के गिलाफ में मुंह छिपाकर रोने लगी तो..." इतना कह वसीम भाई खुद फफक कर रो पड़े थे। तब "ऐसे रोएगा तो फिर हम किस मर्ज़ की दवा हैं? मुस्कुरा, ओ–...मुस्कुरा, हमारे क्लब का नाम न खराब कर।" भल्ला ने कहा और सभी ठहाका लगाकर हंस पड़े। (पृ. 37)

समग्रतः मनमोहक मुखावरण, कथा–तत्वों का यथोचित् निर्वहन, सशक्त घटनाक्रम और साफ–सुथरा मुद्रण जैसी खूबियों ने, लगता है कृति के कलेवर पर चार चाँद ही जड़ दिए हैं। ऐसे में विश्वास किया ही जा सकता है कि मानवीय जीवन के इंद्रधनुषी रंग छलकाता यह संकलन जब–जब जहाँ–जहाँ पहुंचेगा, अपनी सुखद आभा से उल्लेखनीय उपस्थिति साबित करेगा। •

पुस्तक का नाम– मेरी कहानियाँ
लेखिका– रोचिका अरुण शर्मा
प्रकाशक– इंडिया नेटबुक्स, नोएडा
संस्करण– 2024
पृष्ठ– 144
मूल्य– रु. 300–

पता : 1–त–8, अंजलि, दादाबाड़ी, कोटा (राज)–324009
मो. : 9461182571

ई–पेमेण्ट हेतु प्रपत्र

DDO Code

4731

Name (Account holder)

Account Number

Bank Name

ACCOUNT TYPE

☐ SBI Account

☐ Other Then SBI Account

(Tick Type of account "SBI Account" or "Other then SBI Account")

Branch Code / IFSC Code

(Branch Code if account type is SBI Account else IFSC Code)

Address 1	
Address 2	
Address 3	
Mob. No.	
Email ID	

उत्तर प्रदेश

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग उ0प्र0, लखनऊ

ग्राहक / सदस्यता संबंधी प्रारूप

मैं 'उत्तर प्रदेश' (मासिक) पत्रिका की सदस्यता प्राप्त करना चाहता हूँ

वार्षिक	रु. 180/-	☐
द्विवार्षिक	रु. 360/-	☐
त्रैवार्षिक	रु. 540/-	☐

(कृपया सदस्यता अवधि चिन्हित करें)

डी.डी / म.आ.नं. : ______________ तिथि ________

नाम : ______________

ग्राहक का विवरण : छात्र ☐ विद्वत्जन ☐

संस्था ☐ अन्य ☐

पत्र व्यवहार का पता : ______________

____

____

पिन कोड नं0: ☐☐☐☐☐☐

यदि आप पता बदलना चाहते हैं अथवा ग्राहक नवीनीकरण करना चाहते हैं तो कृपया अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करें ☐

नोट : कृपया डी.डी. / एम.ओ. (धनादेश) निदेशक सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग (प्रकाशन प्रभाग), दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ–226 001 के नाम ही भेजने का कष्ट करें।

अंजु अग्निहोत्री की दो कविताएँ

रुकना नहीं! राधिका

रुकना नहीं! राधिका
पूनो का चाँद
उम्मीद खिलने का संदेश
देगा।
सदियों की जकड़न
पिघलने का समय
आकाश इंद्रधनुष से भरेगा।
सतरंगी सम्मोहन में
ओस से नहाई दूब
चमकेगी धूप में खूब।
रुकना नहीं! राधिका
सचेतन सच्चाई में जियो
चुल्लू भर नहीं, जी भर पियो।
हताश नहीं उमंग के संग
बंद पिंजरे के द्वार खोलो
जो मन में होठों से बोलो।
दोहरी या तिहरी मत होना
उड़ जाना हवा के संग
जहां तक जाए अपनी पतंग।
रुकना नहीं! राधिका
नये सपनो के आकाश में
भले ही गुरू न रहे पास में।
समझ लेना यह मेरा तर्क
न कोई गुरु न कोई शिष्य
समझना तुम अपना भविष्य।
आशाओं आकांक्षाओं से
बजेंगे सपनों के जलतरंग
जीवन में फिर भरेंगे नये रंग।

चिड़िया अब नहीं थी

खिड़की खुली थी
सूती पर्दे
खुश्क हवा
बुदबुदा रही थी
ठीक वैसे
जैसे
चिड़िया फुदकती थी
नीले
आकाश के नीचे
चीं चीं करती थी
बावली
गेरू पुती दीवार पर
गोबर लिपे
आंगन में सूने
पनघट में बंद
दरवाजे पर
गुंबदाकार
मीनारों पर
प्रेम की गंध
हवा में
खोज रही थी
हवा
अब भी
सरसरा रही थी
खिड़की
अभी भी खुली थी
पर
चिड़िया अब नहीं थी।

•

पता : ए–305, ओ.सी.आर. बिल्डिंग,
विधान सभा
मार्ग, लखनऊ
मो. : 9415508695

भारत सरकार के रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स की रजिस्ट्री संख्या 33122/78
भारतीय डाक विभाग की डाक पंजीयन संख्या–एल.डब्लू./एन.पी. 432/2006

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रमुख प्रकाशन

उत्तर प्रदेश मासिक	:	समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार की मासिक पत्रिका समूल्य उपलब्ध एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
नया दौर (उर्दू)	:	सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विषय की एक उर्दू मासिक पत्रिका, एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
वार्षिकी (हिन्दी/अंग्रेजी)	:	उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तृत आंकड़ों एवं सूचनाओं का वार्षिक विवरण मूल्य रु. 325/– मात्र।

महत्वपूर्ण प्रकाशनों के लिए सम्पर्क करें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र.
दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
उत्तर प्रदेश के समस्त जिला सूचना कार्यालय

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. स्वत्वाधिकारी के लिए शिशिर, निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ द्वारा प्रकाशित तथा प्रकाश पैकेजर्स, लखनऊ में मुद्रित प्र. संपादक – दिनेश कुमार गुप्ता